पंथ रत्न

ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन

के मुख्य लेख

१ओं सतिगुर प्रसादि॥

धर्म और मनुष्य

ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन
के मुख्य लेखों की पुस्तक

संपादक :

मनजिंदर सिंघ

प्रकाशक:

भाई चतर सिंघ जीवन सिंघ

अमृतसर।

समर्पण

पंथ रतन ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन

की

पवित्रात्मा को समर्पित

— संपादक

विषय सूची

✡

संपादकीय

सांसारिक मोह माया का त्याग कर सत्य, धर्म पर दृढ़ रहने वाले मसकीन जी अब शारीरिक रूप से हमारे बीच नहीं है पर उनके कहे शब्द, शिक्षाएँ, लेखनी एवं गुरुवाणी की गहन व्याख्या वाली कैस्टस / सी.डीज़ हमारे पास उपलब्ध होने से मसकीन जी सदैव हमारे साथ हैं। किसी भी विषय को श्रोताओं के दिल में पहुँचा कर उनकी तरफ से कहे गए और व्याख्या किए हुए शब्द ज्ञान के बारे में आंतरिक सूझ देकर श्रोताओं को मंत्र–मुग्ध करने का गुण केवल और केवल स्वर्गीय मसकीन जी के पास ही था। मसकीन जी पंजाबी, उर्दू, फारसी के निपुण विद्वान ही नहीं थे, अपितु सिखी को वास्तविक रूप में जीने वाले व्यक्ति भी थे। अपने जीवन के दौरान मसकीन जी साहिब श्री गुरु रामदास जी के प्रकाश पर्व से लेकर बंदीछोड़ दिवस तक दीवान–हाल मंजी साहिब, श्री अमृतसर में ही सिख संगतों को कथा ही श्रवण नहीं कराते रहे, अपितु कनाडा, अमरीका, इंग्लैंड, दुबई, थाईलैंड, मलेशिया और संसार के कोने–कोने में सिख संगतों को गुरुवाणी की कथा श्रवण कराते रहे हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के आए हुकमनामों की उनकी तरफ से गुरमति समागमों में की गई व्याख्या को पुस्तक रूप देने का एक अकिंचन सा यत्न किया है, अगर सिख संगतें इसे स्वीकार करें तो स्वयं को भाग्यशाली समझूँगा।

प्रस्तुत पुस्तक 'धर्म और मनुष्य' में उनके कुछ प्रमुख लैकचरों की कैसटस का अनुकरण है, जो मैंने हू–ब–हू लिखने का प्रयास किया है इसमें उनके दस लैकचर– धर्म और मनुष्य, इकि नामि रते रंगु लाए, उतम संत भले

संजोगी, सभु किछु कीता तेरा वरतै, बाबा आइआ है उठि चलणा, विणु भगती घरि वासु न होवी, जिनि साचु पछानिया, जितु कीता पाईऐ आपणा, कहतु कबीरु कोई नही तेरा, ऐसा गुरु वडभागी पाईऐ– शामिल हैं, ताकि प्रेमीजन इनको पढ़कर अपना जीवन सफल कर सकें।

–**मनजिंदर सिंघ**
संपादक

बी–1/284 मकसूदां
जालंधर।

धर्म और मनुष्य

१ ओं सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥

हे प्राण नाथ गोबिंदह क्रिपा निधान जगद गुरो ॥
हे संसार ताप हरणह करुणा मै सभ दुख हरो ॥
हे सरणि जोग दयालह दीना नाथ मया करो ॥
सरीर स्वसथ खीण समए सिमरंति नानक राम दामोदर माधवह ॥

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

गुरसिख मीत चलहु गुर चाली ॥
जो गुरु कहै सोई भल मानहु हरि हरि कथा निराली ॥

(अंग ६६७)

हरि की कथा, हरि की बात, इस संसार से भिन्न है, निराली है। निराली से अभिप्राय, संसार से तालमेल नहीं है। जगत् से तालमेल नहीं है। निराली है। न्यारी है। मनुष्य को परिपूर्ण परमात्मा ने स्थूल रूप में यह तन दिया है, सूक्ष्म रूप में मन दिया है। सुख चाहिए तन को, आनंद चाहिए मन को, मगर मनुष्य को इतनी समझ नहीं है और सुख को यह आनंद समझ बैठा, बस भ्रम यहीं से होता है। तो होता क्या है? सुख तो मिल जाता है, अनेकों को मिला हुआ है। तन को भोजन चाहिए, मिला है। तन को कपड़े चाहिए, मिल गए हैं। रहने के लिए मकान चाहिए, मिल गया है। परिवार के संबंध चाहिए, जुड़े हुए हैं। जिन्दगी की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए धन चाहिए। सुख तो है, मगर मानसिक रूप से बड़ी भारी कलह है, यह पूरे का पूरा सुख भी निरर्थक है।

उस मानसिक कलह में, उस मानसिक बेचैनी में, यह सुख, सुख नहीं रह जाता, क्योंकि कलह बहुत बड़ी हो रही है और सुख की सीमा, और सुख की सीमा क्यों है? बड़े ध्यान से गौर करना एक-एक नुक्ता।

शरीर को जो परिपूर्ण परमात्मा ने ज्ञानेन्द्रियाँ दी हैं, इनकी सीमा है। आँखों की देखने की सीमा है। कानों की सुनने की सीमा है। जुबान की रस मानने और बोलने की सीमा है। नासिका की सीमा है। बुद्धि की सीमा है। हाथों और पांवों के चलने और काम करने की अपनी एक सीमा है। जब भी किसी रस की सीमा आ जाती है, रस, बेरस हो जाता है। शायद आप गहराई से लो।

जैसे मनुष्य ने भोजन खाया, बहुत रस आया एक तरह की साग सब्जी में। फिर शाम को वही, दूसरे दिन वही, तीसरे दिन वही, चौथे दिन वही, बेरस हो जाता है। किसी भी जुबान के रस को, आँखों के रस को, कानों के रस को, नासिका के रस को, चमड़ी के रस को बार-बार Repeat किया जाए, दोहराया जाए तो बेरस हो जाता है।

जैसे एक संगीत की धुन सुनी, बहुत रस आया। अगर Gap मध्य में न रखा जाए और कहा फिर सुननी है तो कुछ न पूछो, रस खो जाएगा। फिर दोबारा सुनी, चार बार सुनी, बार-बार सुनी, बेरस हो गई। कारण? कानों के सुनने की अपनी सीमा है और कानों का रस जब सीमा पर पहुँचता है, बेरस हो जाता है।

आँखों की देखने की अपनी सीमा है और जब देखना सीमा पर पहुँच जाता है तो रूप बेरस हो जाता है। जिस रूप को देख कर रस मिला, जिस दृश्य को देख कर रस मिला, बार-बार देखते सीमा पर पहुँचते बेरस हो गया। एक ही तरह की साग सब्जी बार-बार खाते, बेरस हो गया। मध्य में Gap चाहिए, नहीं तो बेरस हो जाएगा, कारण? इन्द्रियों की सीमा है। इसलिए रस की सीमा है और कोई भी रस, कानों का रस, आँखों का रस, चमड़ी का रस, नासिका का रस, जब सीमा पर पहुँचता है, बेरस हो जाता है।

आज मनुष्य के पास, इन्द्रियों के रस ज्यादा मात्रा में हैं। कारण? विज्ञान ने पदार्थ को मनुष्य के अनुकूल बना दिया है। बहुत सफलता हासिल हुई है।

एक वैज्ञानिक परिश्रम करता है। उसके परिश्रम का फल अनेकों को मिल जाता है। आईनस्टाईन ने पदार्थ से पर्दा उठाया। उसने पदार्थ के रहस्य मनुष्य के सम्मुख रख दिए। सुख लेना है तो पदार्थ को अपने अनुकूल करना पड़ेगा। इस रहस्य को समझने के लिए, उस महान वैज्ञानिक को तो कई वर्ष लग गए। पंद्रह-बीस वर्ष लग गए। उसने अपनी जिन्दगी लगा दी, मगर अब उसके ज्ञान

को पढ़ने के लिए कुछ घंटों का कार्य है। कुछ पढ़ लें तो हमें मालूम हो जाता है कि उसको तो कई वर्ष लग गए थे।

एक वैज्ञानिक का ज्ञान अनेकों का ज्ञान हो जाता है। उसने पदार्थ से पर्दा उठाया और पदार्थ के रहस्य का पता चल गया और उसको पढ़ने से अनेकों को पता चल गया। पदार्थ का जो सुख है अपने अनुकूल करने का, यह सुख भी अनेकों को मिलता है।

कबीर ने खुद से पर्दा उठाया और अपने से पर्दा उठाते ही परमात्मा प्रगट होता है, पर कबीर की साधना, कई जन्मों की साधना है।

पूरब जनम हम तुम्हरे सेवक (अंग ९७०)

कबीर कहते हैं कि मैं पूर्व जन्म में भी साधना करता रहा हूँ। कबीर की यह मेहनत प्रेरणा तो दे सकती है, मगर उसने खुद से पर्दा उठाया तो अब सभी का पर्दा उठ गया, यह कोई आवश्यक है, मैं अर्ज़ करता हूँ।

आईनस्टाईन ने जो हासिल किया, वह सभी को मिल सकता है और मिल गया। कबीर ने जो प्राप्त किया, वह सभी को नहीं मिल सकता, क्यों? हर मनुष्य को अपना पर्दा खुद उठाना पड़ा है। चलो, इसको मैं थोड़ा-सा स्पष्ट करूँ।

ईरानी सूफी संत शेख सायदी कहता है कि हे खुदा! तू दीदार भी देता है, दर्शन भी देता है, झलक भी मिलती है।

फिर तुम परहेज कर लेते हो, बुर्का कर लेते हो, पर्दा कर लेते हो, तुम छिप जाते हो। जब तुम झलक दिखा कर छिप जाते हो, जब तुम दर्शन दे कर पर्दा कर लेते हो, बुर्का कर लेते हो।

यह झलकें छोटी-छोटी सी, कई दफा नाम अभिलाषियों को प्राप्त होती हैं। कभी-कभी मन-सुरति शब्द के बहुत नजदीक चली जाती है। ऐसा मेरा अनुमान है कि हर शहर के आठ-दस व्यक्ति तो ऐसे होते हैं, जिनको यह झलक मिलती हैं, मगर यह झलक इस तरह मिलती है जैसे अंधेरी रात में बादलों में कोई बिजली चमकी हो, बस एक पल के लिए चमकी और गई।

इस तरह के मनुष्य सामान्यता हर शहर में होते हैं। मगर जिनकी जिन्दगी में पूर्ण प्रकाश हो गया हो और अब अंधेरा नहीं है, ऐसे मनुष्य हर शहर में

नहीं होते।

यह झलक शेख सायदी को भी मिली है तो ही वह कह रहा है कि हे मेरे खुदा! तू दीदार देता है, फिर बुर्का कर लेता है, छिप जाता है, ऐसा न कर, क्योंकि जब तू छिप जाता है, हमारे देखने की आग अधिक भड़क उठती है। तुम मूल्यवान भी बहुत हो जाते हो और हमारा हृदय तड़पता है। तुम्हारा मूल्य चुकाना कठिन हो जाता है।

अभिप्राय इस तरह की झलक फिर पैदा करना मुश्किल हो जाता है। तू ऐसा न कर, बुर्का में क्यों चले जाते हो? पर्दे में क्यों चले जाते हो? इस बात की व्याख्या की श्री गुरु गोबिन्द सिंघ महाराज जी के अनन्य भक्त भाई साहिब भाई नन्द लाल ने। वह कहते हैं कि हे शेख सायदी! जब तुम्हें खुदा की झलक न मिले तो खुदा ने बुर्का नहीं किया। वह पर्दे में नहीं गया। तुम्हारी आँखों पर ही कोई पर्दा पड़ गया है। तू अपना पर्दा उठा, वह तो हाज़िर-नाज़िर है। तुझ पर पर्दा पड़ा है। तुम्हारी आँखों पर कोई पर्दा पड़ा हुआ है। तू अपना पर्दा हटा ले।

मैं फिर अर्ज़ करूँ आईनस्टाईन ने पदार्थ का पर्दा उठाया और पदार्थ के रहस्य दुनिया के सम्मुख रख दिए। भक्त को तो अपने मन से ही पर्दा हटाना पड़ता है। परमात्मा पर कोई पर्दा नहीं है।

है कोई साजणु परदा तोरा॥ (अंग ५६२)

महाराज की वाणी कहती है, हे प्रभु! है कोई ऐसा पर्दा जो तुम्हें छिपा ले? अगर कोई पर्दा परमात्मा को छिपा सकता है तो फिर परमात्मा बड़ा नहीं, पर्दा बड़ा है। आप सभी समझदार हो। फिर पर्दा बड़ा है फिर तो पर्दे की पूजा करें, परमात्मा की पूजा करने की क्या आवश्यकता है क्योंकि परमात्मा से भी एक बड़ा है। क्या? पर्दा जो परमात्मा को छिपा लेता है।

है कोई साजणु परदा तोरा॥

कोई तेरा पर्दा नहीं है। तू बेपर्दा है, मगर किया क्या जाए, मनुष्य की आँखों पर पर्दा पड़ा है। मनुष्य की आँखों पर पर्दा है। जिस दिन मनुष्य अपनी आँखों का पर्दा उठाता है तो भाई साहिब भाई नन्द लाल कहते हैं कि ब्राह्मण देखने की कोशिश करता है मन्दिर में जाकर परमात्मा को और मुसलमान देखने की

कोशिश करता है मस्जिद में जाकर खुदा को। मगर नन्द लाल कहते हैं कि मैं तो जिधर देखता हूँ, खुदा के बिना अन्य है ही कुछ नहीं।

मैं तो शर्मसार हो गया हूँ, मैं तो मस्त हो गया हूँ। यह तो हर तरफ वो ही है। गुस्ताखी माफ़ मुझे दोहराहने देना, अगर न दिखाई दे तो हमारी आँखों पर पर्दा है।

एक शायर इसको ऐसे कहते हैं:

"हर ज़र्रे में उस का ही ज़हूर है।
तुझ को नज़र न आए तो यह किस का कसूर है।"

फिर इस में दोषी किसको ठहराओगे? एक अन्य विद्वान बहुत विद्वतापूर्ण तरीके से बड़ी कीमती बात कहता है।

"बेपर्दा इतना कि हर ज़र्रे में है उसका ज़हूर।"

ध्यान से सुनना–

"बेपर्दा इतना कि हर ज़र्रे में है उस का ज़हूर।
बापर्दा इतना कि नज़र तक आता नहीं।"

दोनों बातें कह गया। बेपर्दा और इतना व्यापक है कि हर तरफ वो ही वो है, मगर पर्दे में इतना है कि दिखाई नहीं देता।

यहां हर मनुष्य को अपना पर्दा हटाना पड़ेगा। पर्दा अज्ञानता का है, पर्दा अहंकार का है, पर्दा वासना का है। एक ही पर्दा काफी होता है। सैंकड़ों पर्दे मनुष्य की आँखों पर पड़े हुए हैं। कहीं एक पर्दा पड़ा हुआ है? कहीं एक पर्दा हटा भी लें, तो दूसरा है, तीसरा है, चौथा है। कभी तो जिन्दगियों की जिन्दगियाँ लग जाती हैं, पर्दा हटता ही नहीं और मनुष्य दीदार के बिना ही जिन्दगी गंवा देता है। पूर्ण हुए बिना जीवन गंवा देता है। अब मैं दोबारा दोहराऊं–तन को सुख चाहिए, मन को आनंद चाहिए। सुख तो मिलता है अगर पदार्थ को अपने अनुकूल कर लें और सभी सुख इन्द्रियों के सुख हैं। कुछ देख कर सुख मिल जाता है। कुछ सुनकर सुख मिल जाता है। कुछ सूंघ कर सुख मिल जाता है। कुछ स्पर्श करके सुख मिल जाता है। कुछ खा कर सुख मिल जाता है। और कौन–सा सुख है, इसके अलावा अन्य सुख बताओ और कौन–सा सुख है?

कहते हैं कि स्वर्ग का राजा इन्द्र है। इन्द्र की व्याख्या यह है- जिसके पास इन्द्रियों का पूरा रस मौजूद है, वह इन्द्र है और जिसके पास इन्द्रियों का पूरा रस मौजूद है, वह स्वर्ग में है। आँखों को जो देखने के लिए चाहिए, कानों को जो सुनने के लिए चाहिए, जुबान को जो रस चाहिए, मौजूद हैं। चमड़ी को जो स्पर्श करने के लिए चाहिए, नासिका को जो सूंघने के लिए चाहिए, मौजूद हैं। इन्द्र आज पृथ्वी पर शारीरिक तल पर स्वर्ग बन गया, मानसिक तल पर नरक बन गया।

कहते हैं किसी समय मनुष्य का मन स्वर्ग में था और तन नरक में था। कारण? रहने के लिए अच्छे मकान नहीं थे। पहाड़ों की गुफाओं में रहता था। वृक्षों के नीचे रात बिताता था और छोटी छोटी झोंपड़ियों में रहता था। एक जगह से दूसरी जगह जाना हो तो बेचारे को पैदल जाना पड़ता था। कच्चे फल खा लेने या जंगल में शिकार कर कच्चा मांस खा लेना। इसके अलावा कोई साधन ही नहीं था। आज हजारों तरह के पकवान मौजूद हैं और रहने के लिए अच्छे मकान मौजूद हैं। पहनने के लिए अच्छे-अच्छे कपड़े हैं, सभी कुछ है। तन के तल पर स्वर्ग बन गया है। मन के तल पर नरक बन गया है। विज्ञान ने तन के लिए स्वर्ग बना दिया है, मगर मनुष्य के पास ज्ञान नहीं है। इसलिए मन के तल पर नरक बना हुआ है। बहुत लोग हैं, जिनके तन स्वर्ग में हैं और मन नरक में हैं। यह भी मैं अर्ज़ करूँगा।

नरक और स्वर्ग स्र्व-वर्ग इन्द्रियों का सुख, सुख को ही स्वर्ग कहते हैं। सभी रसों का अभाव चिन्ता ही चिन्ता, व्याकुलता ही व्याकुलता। मन के तल पर फिक्र ही फिक्र है। बड़े-बड़े लोग जो तुम्हें स्वर्ग में रहते दिखाई दें, उनका मन नरक में है। यह भी मैं अर्ज़ करूँ, नरक में है।

इस कुंभी नरक में से मन को निकालना है और यह हर मनुष्य को खुद करना पड़ेगा। किसी वैज्ञानिक ने नहीं निकालना। आईनस्टाईन ने पदार्थ से पर्दा उठा कर लगभग पदार्थों का सुख सभी की झोली में डाल दिया। हमें बिजली के लिए कोई आविष्कार करने की आवश्यकता नहीं। तजुर्बे करने की जरुरत नहीं। स्विच ऑन-ऑफ करते लाईट जल जाती है, बुझ जाती है। सारे सुख मौजूद है, पर जिस बेचारे ने खोज की, वह तो कई वर्ष लगा रहा, कितना परिश्रम किया उसने, कितनी साधना की, कितनी तपस्या की और कितनी दफा आविष्कार उसके सफल भी नहीं हुए। एक मनुष्य की मेहनत और उसका फल

सभी की झोली में पड़ गया। मगर एक कबीर का परिश्रम है, उसने खुद से पर्दा उठाया और प्रभु की झलक मिल गई। महान आनंद की प्राप्ति हो गई, मगर कबीर की माता के पास भी आनंद नहीं था। कबीर के पास था।

मुसि मुसि रोवै कबीर की माई॥
ए बारिक कैसे जीवहि रघुराई॥

(अंग ५२४)

कबीर की मां भी फूट-फूट कर रोती है कि कबीर ने कामकाज छोड़ दिया है। मालूम नहीं बच्चों का पालन-पोषण कैसे होगा। घर का गुजारा कैसे चलेगा। कबीर की मां फूट-फूट कर रोती है। वह आनंद कबीर के पास है, कबीर की मां के पास नहीं है। यह भी मैं अर्ज़ कर रहा हूँ।

कहते हैं धन सामाजिक है। एक व्यक्ति को धन मिल गया, उसकी पत्नी को भी मिल गया। उसके बच्चों को भी मिल गया। सभी को मिल गया। सारे परिवार को मिल गया। धन सामाजिक है। इन्द्रियों का रस सामाजिक है। आत्मिक रस सामाजिक नहीं है। एक को मिल गया तो पूरे परिवार को नहीं मिलता। बड़े-बड़े धार्मिक घरों में, जो एक सिरमौर मनुष्य धार्मिक है, अन्य सदस्य बड़े अधार्मिक देखे गए हैं। बड़े-बड़े अधार्मिक घरों में जो सिरमौर मनुष्य अधार्मिक थे, बड़े-बड़े धार्मिक देखे गए हैं। बिल्कुल अधार्मिक है हिरण्यकशिपु, उसके घर प्रहलाद है, हैरानी है। बिल्कुल अधार्मिक है ध्रुव का पिता, मगर ध्रुव को देखकर हैरानी होती है और इसी तरीके से खोज करेंगे समय के अवतार पुरुष है श्री गुरु रामदास जी साहिब। उनका बड़ा पुत्र जहांगीर के साथ साजिश करता है, आखिर में फौज ले कर आया। अपने भाई गुरु अर्जुन देव से लड़ता रहा, झगड़ा करता रहा। धर्म सामाजिक नहीं है। परमात्मा का नाम सामाजिक नहीं है। एक को मिला तो बस एक को ही मिला, अन्य को नहीं, अन्य को प्रेरणा लेनी पड़ेगी। अन्य को खुद कुछ करना पड़ेगा। आठों पहर नाम की मस्ती में रहने वाले गुरु नानक देव जी को माता तृप्ता जी तो कहती हैं, पुत्र बावला है। यह तो बिल्कुल बावला है और पिता बीस रुपये के बदले थप्पड़ मारता है। यह निखट्टु है। यह तो कोई काम ही नहीं करता। पर इसको गहराई से ले लेना। धर्म सामाजिक नहीं है। कोई पूरे का पूरा मुल्क धार्मिक नहीं होता। कोई पूरी की पूरी कौम धार्मिक नहीं होती, कोई पूरे का पूरा परिवार धार्मिक नहीं होता। व्यक्ति धार्मिक होता है, मनुष्य धार्मिक होता है।

परन्तु मैं अर्ज़ कर दूँ। कोई पूरी की पूरी कौम भी धनवान हो सकती है जैसे यहूदी। कहते हैं यहूदियों में गरीबी नहीं है। इस समय दुनिया की सबसे धनवान कौम यहूदी है। दुनिया की पूरी अर्थ-व्यवस्था पर यह कौम छाई हुई है। बड़े व्यापारी यह हैं, चोटी के वैज्ञानिक यही हैं, चोटी के धनवान यही हैं। कोई पूरी कौम तो धनवान हो सकती है, कोई पूरी कौम धार्मिक नहीं हो सकती। यह भी मैं अर्ज़ करूँ। कोई पूरा परिवार भी धार्मिक नहीं होता। एक ही व्यक्ति होता है। यही कारण है कि सारी दुनिया में धन तो बढ़ता जा रहा है, क्योंकि धन सामाजिक है। सारी दुनिया में धर्म कम होता जा रहा है क्योंकि धर्म व्यक्तिगत है। सिर्फ एक को मिलता है, सिर्फ एक को ज्ञान मिला। प्रभु के नाम का रस मिला। उस 'एक' से अगर परिवार प्रेरणा ले ले तो बात बन सकती है, मगर अक्सर हज़रत ईसा कहते हैं कि महापुरुषों से तीन चार व्यक्ति तो वंचित ही रह जाते हैं। प्रथम उसके माता-पिता, दूसरे उसके शरीक, तीसरे उसके शहर वासी, चौथे उसके घनिष्ठ मित्र, वह रह जाते हैं। वह तो कहते हैं कि लो, कल तक हमारे साथ खेलता था आज संत बना घूमता है क्योंकि ईसा को अपने ही शहर में ठुकरा दिया गया था। ईसा को अपनी कौम ने ठुकरा दिया। यहूदियों ने ठुकरा दिया। सूली पर यहूदियों ने ही चढ़ाया। अपनी कौम ने ही नहीं माना। अपने शहर ने ही नहीं माना। अपने शरीकों ने ही नहीं माना।

यह भी मैं अर्ज़ करूँ कि बेदियों ने ही कह दिया। अपनी कौम ने ही कह दिया। पिता ने कह दिया निखट्टू है। गुस्ताखी माफ़, माता ने भी कह दिया यह तो बावला है। बावलों जैसी बातें करता है। एक व्यक्ति धार्मिक हो सकता है, ब्रह्मज्ञानी हो सकता है, अवतार हो सकता है, पूरा परिवार नहीं होता, पूरी कौम नहीं होती। धन सामाजिक है। एक को मिला तो सभी को मिल गया, पूरे परिवार को मिल गया, सामाजिक है। पिता राजा है, पुत्र स्वयं राजकुमार हो गए, पत्नी स्वयं रानी हो गई। एक के राजा होने से, पत्नी स्वयं ही रानी हो गई। बच्चे स्वयं ही राजकुमार हो गए, कुछ भी करना नहीं पड़ा। राज-पाट, धन-संपदा पूरी की पूरी सामाजिक है। धर्म सामाजिक नहीं है। एक को मिल गया तो बस एक ही को मिला। उससे कोई प्रेरणा ले ले तो बात बन सकती है।

बनारसवासियों ने, अपने शहरवासियों ने कबीर से प्रेरणा नहीं ली, बल्कि कबीर को बनारस से निकाल दिया। शायद आप को मालूम हो कि अंतिम समय

कबीर ने 'मगहर' में व्यतीत किया। उनकी मृत्यु, उनकी देह का गमन 'मगहर' में हुआ था। बनारस वासी तो रोजाना झगड़ते रहे, इल्जाम लगाते रहे। शहरवासियों ने ही कबीर को महान नहीं माना, शहरवासी क्या कहते हैं, कबीर खुद कहते हैं:

लोगु कहै कबीरु बउराना॥ **(अंग ११५८)**

यह पागल है। पागल हमारे शहर में रहता है। पूरे बनारस ने कह दिया, पागल है। अब कौन बताए कि एक ही तो व्यक्ति है जिसके पास परमात्मा की ख़बर है। जिसके पास परमात्मा का पता है। इस को बहुत बड़ा विद्वान बड़े विद्वात्तपूर्ण तरीके से बयान करता है, जरा ध्यान से सुनना:

"किस से पता पूछें मंजिल-ए-जानां।"

हे मेरे प्रभु! तेरा पता मैं किससे पूछूं।

"किस से पता पूछें मंजिल-ए-जानां,
जिस को ख़बर थी तेरी वो बेख़बर मिला।"

जिसके पास तेरी ख़बर थी, वे तो ख़बर बताने लायक नहीं था। कहता है अकथ, अकथ, मैं नहीं कह सकता, नहीं कह सकता।

जे हउ जाणा आखा नाही

नहीं कहना, महाराज कह दो तो सतिगुरु कहते हैं

कहणा कथनु न जाई॥ **(जपुजी साहिब)**

जिसने जान लिया, वह कहता है मैं बयान नहीं कर सकता और जो बयान कर रहे है उनको बिल्कुल पता ही नहीं। साधारण मनुष्य दुविधा में पड़ जाता है।

"किस से पता पूछें मंजिल-ए-जानां।

हे मेरे खुदा! तेरा पता मैं किससे पूछूँ?

"जिसको ख़बर थी तेरी वो बेख़बर मिला।"

जिसके पास तेरी ख़बर थी, तेरा पता था, वह तो यह कहने लगा कि मैं बयान ही नहीं कर सकता।

किआ हउ कथी कथे कथि देखा मै अकथु न कथना जाई॥
(अंग ७९५)

कारण? जुबान की अपनी सीमा है। असीम की प्राप्ति हुई है। आँखों की देखने की अपनी सीमा है तो असीम की प्राप्ति हो गई। कानों की सुनने की, दिमाग की समझने की सीमा है। असीम की प्राप्ति हो गई है। इसलिए प्रत्येक भक्त ने कह दिया, नहीं कह सकते। श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी का फुरमान है। आप कहते हैं कि मैं नहीं कह सकता। मैं क्या बयान करूँ। कितना मैं कथन करूँ। मेरा कथन छोटा रह जाता है। वह बहुत बड़ा है, बहुत बड़ा है, बहुत बड़ा। अवतार पुरुषों ने बहुत कुछ बोला। उनके बोलों में प्रभु टपकता, झलकता है, फिर भी वह कहते हैं।

किआ हउ कथी कथे कथि देखा मै अकथु न कथना जाई॥
(अंग ७९५)

अब मैं फिर दोहराऊँ। पदार्थ को अपने अनुकूल करें तो सुख मिलता है और इस सुख की अपनी सीमा है। यह सुख जैसे ही अपनी सीमा पर पहुँचता है, सुख, सुख नहीं रह जाता, बेरस हो जाता है। इन्द्रियों के सभी रस बेरस हो जाते हैं। मुझे अच्छी तरह याद है दास के साथ संत मथुरा दास निरमले महापुरुष आते थे। उनको कहीं भिंडी की सब्जी बहुत अच्छी लगती थी। यह कटक की बात है। संगतों को मालूम हो गया। हमें पांच-सात दिन रहना था। सुबह भिंडी, शाम को भिंडी, दूसरे दिन भिंडी, चौथे दिन भिंडी, थाली एक दिन दूर फैंक दी, कहने लगे यह तो पीछा नहीं छोड़ती। हद हो गई, कितनी स्वाद आपको लगती थी, यह बे-स्वादी क्यों हो गईं? किसी भी इन्द्री के रस को बार-बार दोहराओ, बेरस हो जाएगा। रस बना रहे कुछ दिन का Gap चाहिए, अंतराल चाहिए। हर रस बेरस हो जाएगा। एक ही रस है जो कभी बेरस नहीं होता। कौन-सा? 'नाम रस'। परमात्मा का रस। क्यों? असीम है, उसकी कोई सीमा नहीं। यह भी मैं अर्ज़ करूँ, इसलिए महापुरुषों ने कहा है जो कुछ हमने जाना है, जानने को और कुछ भी है। जो कुछ हमने माना है, मानने को और कुछ भी है, मगर यह कैसे प्राप्त होगा? स्वयं को परमात्मा के अनुकूल करने से।

*गुरसिख मीत चलहु गुर चाली॥
जो गुरु कहै सोई भल मानहु
हरि हरि कथा निराली॥*

(अंग ६६७)

मनुष्य का अब अहंकार चरम सीमा पर है, क्योंकि पदार्थ को अपने अनुकूल करने में सफल हो गया है। कभी-कभी करिश्में जरूर हो जाते हैं और मनुष्य हैरान रह जाता है कि सब कुछ मैं अपने अनुकूल कर रहा हूँ मगर फिर भी मैं देखता हूँ कि कहीं-कहीं पदार्थ प्रतिकूल होकर मुझे तबाह कर जाता है। कितनी ही विज्ञान उन्नति कर ले, कितनी साईंस उन्नति कर ले। जैसे भूकंप आया गुजरात में, आधा गुजरात तबाह हो गया और हजारों जाने चली गईं। आप सुनकर हैरान होंगे, चाहे यह गुरुद्वारा अहमदाबाद का था, भावनगर का था, गांधीधाम का था, राजकोट का था सही सलामत है। आस-पास की इमारतें गिर गईं, अच्छी तरह मुझे याद है कि 25 तारीख को हम अहमदाबाद में थे। पूरे गुजरात का भ्रमण करके उस वर्ष की बात है और पांचों तख्तों के सिंघ साहिबान भी साथ थे। ग्यारह रागी जत्थे थे। गुरुद्वारे के पास इमारत थी। उसमें ठहराया गया। सात-आठ फ्लैट थे, उनमें ठहराया गया। 25 तारीख शाम तक हम वहीं थे। शाम को निकल गए। 26 को सुबह भूकम्प आया और मालूम हुआ कि आधा गुजरात तबाह हो गया। जिस इमारत में हम सभी ठहरे थे, पांच मंजिले थीं। वह गिर गई। गुरुद्वारे को दरार नहीं आई। लंगर चलता रहा। कई महीने वहाँ ही रहे, गुजरातियों के लिए, सभी उन पीड़ितों के लिए। इसे ऐसे कहते हैं कि कुछ कर्म सांझे होते हैं और कर्मों का संयोग बन जाता है। जो मैंने कर्म किया, उस तरह का दूसरे ने भी किया, तीसरे ने भी किया, चौथे ने भी किया, पांचवे ने भी किया।

कर्मों की सांझ, कई दफा करने वालों की सांझ बना देती है। उनको भी इक्कठा कर देती है। इसको बहुत ध्यान से सुनना, क्योंकि कई दिनों से यह भी प्रश्न चल रहा था। जैसे कईयों के नक्श-नुहार मेल खा जाते हैं, कईयों का स्वभाव मेल खा जाता है, कईयों की आवाज़ मेल खा जाती है। इसकी आवाज़ तो उससे मिलती है। इसकी चाल तो उस आदमी से मिलती है। इसके नक्श-नुहार तो उससे मिलते हैं, इसका स्वभाव तो उससे मेल खाता है। कर्मों की सांझ भी, अनेकों से मेल खा जाती है। जो मैं करता रहा जो मैं सोचता रहा, वह

अन्य भी सोचते रहे, अन्य भी करते रहे हैं और कर्म बीज है इन बीजों में। कर्म हम हजारों तरह के करते हैं, फल सिर्फ दो ही निकलते हैं। तीसरा-चौथा फल नहीं निकलता। दो ही फल निकलते हैं-दुख और सुख। और कोई फल नहीं है। दुख और सुख फल हैं। कर्म हम हजारों तरह के करते हैं। सोच हमारी हजारों तरह की होगी परन्तु फल तो दो ही हैं- सुख और दुख। सुख का तात्पर्य है कोई कर्म सही था, कोई सोच सही थी। दुख का मतलब है कोई कर्म गलत था। बस, इतनी बात है। शुभ कर्म वालों की भी सांझ बन जाती है। अशुभ कर्म करने वालों की सांझ बन जाती है। जब कर्मों की सांझ बन जाए तो कर्म एक जैसे होंगे, जैसे मैंने जो बीज बोए थे दूसरे ने भी खेत में बोए, तीसरे ने भी खेत में बोए, एक समय फलीभूत हुए हैं तो बोए एक समय थे तो फलीभूत एक ही समय हुए है। गुस्ताखी माफ, कई बार हजारों और लाखों की यह महामारी, कर्म सांझे हो जाते हैं। इसको ऐसे न समझ लेना कि अचानक हो गया। अचानक कुछ भी नहीं होता। जगत् में सभी कुछ वैधानिक है। गुरु नानक देव महाराज कहते हैं:

जिन्ह की चीरी दरगह पाटी तिन्हा मरणा भाई॥

(अंग ४१८)

अहमदाबाद में कत्लेआम शुरु किया बाबर ने, परन्तु फिर भी कुछ बच गए। मरदाना पूछता है, "महाराज! इतने मारे गए फिर भी यह तो बच गए हैं।" महाराज कहते हैं:

जिन्ह की चीरी दरगह पाटी तिन्हा मरणा भाई॥

जिनके जीवन का चोला दरगाह से फाड़ दिया गया, वही गए।

जिन्ह की चीरी दरगह पाटी तिन्हा मरणा भाई॥

जिनके ऊपर इस तरह की मोहर लग गई, कर्म सांझे हो जाते हैं और कर्मों का फल भी सांझा है। जो मैंने बीज बोया था, फलीभूत हुआ। दूसरे ने भी बोया था। वह भी उसी समय फलीभूत हुआ। एक ही समय कहीं बीज बोए गए, एक समय कहीं वह फलीभूत हुए, मगर परमात्मा कई दफा इस तरह के सभी कर्मों का एक ही समय फैसला करता है। जगत् में गैर-वैधानिक कुछ भी नहीं है।

सब कुछ वैधानिक तरीके से होता है, सब कुछ नियमपूर्वक होता है। अगर कह दो नहीं अचानक ऐसे ही हो गया तो फिर कोई परमात्मा नहीं। फिर कोई ईश्वर नहीं। यह भी मैं अर्ज़ कर दूँ।

ऐसा भी हुआ, गुजरात में ऊँची-ऊँची इमारतें गिरी हैं। आठ-आठ, दस-दस मंजिलें और दसवीं मंजिल से गिर कर भी किसी को खरोंच तक नहीं आई। वह भी हैं। देखकर हैरानी हुई जब मुझे गांधीधाम में दिखाया एक सज्जन ने। कहते हैं कि दस मंजिलों की इमारत नीचे आ गई और यह बच गया। इसको खरोंच तक नहीं पहुँची। इसको चोट नहीं आई।

यह एक हैरानी की बात है। कर्मों की सांझ भी बन जाती है। खैर, संक्षेप में मैं अर्ज़ करूँ, पदार्थ को अपने अनुकूल करें, शरीर को सुख मिलते हैं, स्वयं परमात्मा के अनुकूल हों तो आनंद मिलता है। सुख, दुख में बदल जाता है। कोई ऐसा सुख नहीं जो दुख में बदला है। कब दुख में बदलता है, जब सुख अपनी सीमा पर पहुँच जाता है। जैसे मैं अब फिर उदाहरण दे दूँ। एक कवि कविता तुम्हें सुनाए, बहुत रस आया, बहुत रस आया। वह कवि अब कह रहा, मैं आपको दूसरी दफा सुनाने लगा हूँ। आधा रस खो गया और अब वह कवि कहे अब मैं आपको तीसरी दफा सुनाने लगा हूँ क्योंकि आपको रस अभी आ रहा है। तीन हिस्से रस खो गया और वह हठ करने लगे। हठी होकर कहने लगे अब मैं आपको चौथी दफा सुनाने लगा हूँ। पूरा रस खो गया और वह हठ करे कि अब मैं आपको पांचवी बार सुनाने लगा हूँ तो सुख, दुख में बदल जाएगा। अब मनुष्य दुखी होगा, परेशान होगा। हद हो गई, अभी तो रस आ रहा था। सुख आ रहा था। सुख ही दुख बन गया। कौन सा सुख, दुख बन जाता है, जब सुख अपनी सीमा पर पहुँच जाता है। हर सुख सीमा पर पहुँचते दुख बन जाता है। आनंद कभी दुख नहीं बनता। क्यों? परमात्मा की सीमा नहीं, आनंद की सीमा नहीं, आनंद बढ़ता ही जाएगा।

दिनु दिनु चड़ै सवाइआ नानक होत न घाटि ॥ (अंग ३००)

किसी भी इन्द्री के सुख को बार-बार दोहराया जाए, बेरस हो जाएगा। परमात्मा के नाम को बार-बार दोहराया जाए, रस बढ़ता जाएगा, बढ़ता जाएगा। बशर्ते किसी दिन सुरति जुड़ जाए, फिर रस बढ़ता जाएगा, बढ़ता जाएगा। यही कारण है, दुनिया के धर्म ग्रंथों के टीके एक नहीं रहे। शायद मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि

नहीं। पचास-साठ टीके जपुजी साहिब के हुए हैं। उदासियों ने किए हैं, निर्मलियों ने किए हैं, संप्रदायी ज्ञानियों ने 'जपुजी साहिब' के टीके किए हैं।

महाराजा फरीदकोट ने टीका करवाया जिसको फरीदकोटियों का टीका कहते हैं। भाई वीर सिंघ ने किया। प्रिंसीपल साहिब सिंघ ने किया। ज्ञानी हरबंस सिंघ ने किया। सोढ़ी तेजा सिंघ ने किया। अनुमतियों ने किया। आचार्य विनोबा भावे ने किया। कृष्णा नन्द ने किया और आचार्य रजनीश ने किया। अनुमतियों ने भी टीके किए हैं। ख्वाजा दिल मुहम्मद ने किया। मुसलमान हैं। जपुजी साहिब की नज़म के लिए टीका किया। अब यह पचास-साठ टीके हैं। एक टीका दूसरे टीके से मेल नहीं खाता। बिल्कुल ही मेल नहीं खाता। जरा सी तर्क दृष्टि, तर्क बुद्धि वाला मनुष्य कह देगा, एक ठीक हो सकता है, बाकी नहीं। ख्वाजा दिल मुहम्मद ठीक हो सकते हैं, कृष्णा नन्द गलत हैं। कृष्णा नन्द ठीक हो सकते हैं, आचार्य विनोबा भावे गलत हैं। आचार्य विनोबा भावे ने यथावत व्याख्या भी लिखी है:

मंनै मगु न चलै पंथु॥

इस विषय पर उन्होंने दस-पन्द्रह पृष्ठ लिखें हैं। जो एक दफा प्रभु को मान लेता है, उसका कोई पंथ नहीं होता। ऐसे कहते हैं आचार्य विनोबा भावे। यह टीका हिन्दी में है। मुझे कहने लगा, "हमने भी छोटी सी अक्ल से 'जपुजी साहिब' को खोलने की कोशिश की है। आप देखें हमने कहाँ तक खोला है।" मुझे ऐसे कहा था। बहुत पुरानी बात है, इन्दौर की।

यह पचास-साठ टीके एक-दूसरे से मेल नहीं खाते। जो आचार्य विनोबा भावे ने लिख दिया उसके बिल्कुल उल्ट है रजनीश। रजनीश ने जो लिख दिया, कृष्णा नन्द से मेल नहीं खाता।

जो कृष्णा नन्द ने लिखा, फरीदकोटियों से मेल नहीं खाता, फरीदकोटियों का टीका भाई वीर सिंघ से मेल नहीं खाता और भाई वीर सिंघ का टीका प्रिंसीपल साहिब सिंघ से मेल नहीं खाता। एक दूसरे से किसी टीके का मेल नहीं। इसमें से एक ठीक होगा, बाकी गलत। पहले मैं ऐसे ही कहता था। पांच सात साल मैंने इस तरह की गलती की। मैं कहता था कोई एक ठीक हो सकता है, सभी ठीक नहीं हो सकते। फिर मैंने इस गलती को सुधारा। सभी ठीक हैं।

आपु आपुनि बुधि है जेती॥
बरनत भिंन भिंन तुहि तेती॥

(चौपई साहिब)

कारण? आज जो रस आया और जो लिखा जा रहा है, अगर जपता रहा तो कल और आएगा। एक एक मिनट में, एक एक सैकेण्ड में रस बढ़ता-बढ़ता, बढ़ता ही जाएगा। भोजन का रस, पदार्थ का रस, इन्द्रियों का रस, बार-बार रिपीट करते कम होता है, कम होता-होता कम होता ही जाएगा। भोजन के पहले निवाले में जो रस होगा, अंतिम में नहीं होगा। जिस सब्जी में आज रस आया, शाम को वही, कल वही, परसों वही, रोज़-रोज़ रिपीट हुई। यकीन मानो बेरस हो जाएगी। रसना का रस, कानों का रस, आँखों का रस, हर बार सम्मुख आता गया। हर बार सम्मुख हासिल हुआ। बेरस हो जाएगा।

बार-बार रिपीट करते ही इन्द्रियों का रस, चरम सीमा पर पहुँच कर बेरस हो जाएगा। कोई रस नहीं रहेगा और जब बेरस हो जाएगा तो दुख। अभी मैंने अर्ज़ की है काफी दफा सुनी कविता इतना रस, उत्साह पैदा हो गया। उमंग पैदा हो गई। उसने बार-बार दोहराई। बेरस होकर दुख बन गई, इन्द्रियों के सभी रस, सीमा पर पहुँच कर बेरस हो जाते हैं और बेरसी हो जाना है 'दुख' 'दुख'।

परमात्मा का नाम असीम है क्योंकि परमात्मा असीम है। वह रस कभी खत्म ही नहीं होता:

दिनु दिनु चड़ै सवाइआ नानक होत न घाटि॥

(अंग ३००)

पल-पल में बढ़ता जाएगा। पल-पल में बढ़ता जाएगा। इसलिए संत जपते-जपते थकते नहीं।

माधउ जल की पिआस न जाइ॥ (अंग ३२३)

हे प्रभु! तेरे नाम का जल पीते हैं। और पीने की इच्छा, और पीने की इच्छा, और पीने की इच्छा।

इसको जिस तरीके से गुरु अर्जुन देव जी महाराज ने बयान किया है, श्रवण कर लो, गुरु कहते हैं:

हे प्रभु! तेरा नाम सुनने में इतना रस आता है और इतना रस बढ़ता है, मेरी

एक मांग है:

कोटि करन दीजहि प्रभ प्रीतम
हरि गुण सुणीअहि अबिनासी राम॥

(अंग ७८१)

प्रभु! तेरे नाम में रस इतना है, मगर क्या करूँ, कान सिर्फ तूने दो दिए हैं और रस इतना कि चारों ओर बिखरा हुआ है। कहीं तेरी बात मस्जिद में हो रही है। कहीं तेरी बात मंदिर में हो रही है, कहीं वीराने में हो रही है, कहीं घर-घर में हो रही है। हर तरफ तुम्हारा यश बिखरा हुआ है।

मुझे करोड़ों कान दे, मैं सब जगह सुनूँ।

कोटि करन दीजहि प्रभ प्रीतम
हरि गुण सुणीअहि अबिनासी राम॥

भाई गुरदास भी बयान करते हैं:

स्रवण दारिद्री सुणि अंम्रित बचन प्रिय,
अचवंति सुरति पियास न मिटाई है॥

हे प्रभु! मेरे कान बड़े लोभी हैं, तेरा नाम सुनते हैं, तृप्त ही नहीं होते, तृप्त ही नहीं होते। जैसे लोभी धन से तृप्त नहीं होता। हे प्रभु! मैं तुम्हारे नाम से तृप्त नहीं होता और जपना चाहता हूँ, और सुनना चाहता हूँ। कारण? रस बढ़ता, बढ़ता, बढ़ता ही जाता है।

दिनु दिनु चड़ै सवाइआ नानक होत न घाटि॥

इसलिए आनंद भी बढ़ता जाएगा, रस भी बढ़ता जाएगा। जो बढ़ता ही जाए, बढ़ता ही जाए, जिसकी कोई सीमा ही नहीं, उसको आनंद कहते हैं। जो बढ़ता ही जाए, बढ़ता ही जाए और एक सीमा पर बेरस हो जाए, उसको इन्द्रियों का सुख कहते हैं। उम्मीद है बात समझ में आई होगी। सुख उसकी सीमा है। 'आनंद' उसकी कोई सीमा नहीं। सुख इन्द्रियों का रस है। कुछ देखकर सुख मिलता है, कुछ सुनकर रस मिलता है। कुछ खाकर रस मिलता है। कुछ स्पर्श करके रस मिल रहा है। कुछ सूंघ कर रस मिल रहा है। बार-बार रिपीट करते गए, रिपीट करते गए, दोहराते गए, दोहराते गए बेरस हो गया। क्योंकि सीमा है, फिर कुछ

अंतराल चाहिए, फिर कुछ गैप (Gap) चाहिए, वह दोबारा रस आ सके। बेरस हो जाएगा। प्रभु का नाम कभी बेरस नहीं होता क्योंकि सीमा नहीं है, असीम है। उस असीम को हासिल करने के लिए अक्ल से आगे जाना पड़ेगा। इन्द्रियाँ सीमित हैं, मनुष्य की अक्ल भी सीमित है, यह दूसरा नुक्ता ध्यान से सुन लेना। अक्ल भी मनुष्य की सीमित है, मगर अक्ल से आगे जाकर, असीम रस और असीम की समझ प्राप्त कर सकता है, जिसको अक्ल द्वारा और जुबान द्वारा समझना कठिन हो जाएगा, कठिन हो जाएगा। लेकिन असीम को समझ सकता है। अक्ल कारण नहीं समझेगा, अक्ल से आगे निकलकर समझेगा। जुबान की सीमा है। बयान भी नहीं कर सकेगा।

किआ हउ कथी कथे कथि देखा
मै अकथु न कथना जाई॥

(अंग ७९५)

यह आनंद कैसे हासिल होगा। मन को परमात्मा के अनुकूल करें। जैसा परमात्मा है, वैसा मनुष्य अपने मन को कर सकता है। वह निरवैर है, मन को निरवैर करना पड़ेगा। वह दयालु है, मन को दयालु करना पड़ेगा। वह भेदभाव से रहित है, मन को भेदभाव से रहित करना पड़ेगा।

हरि जनु ऐसा चाहिए जैसा हरि ही होइ॥ (अंग १३७२)

जैसे ही कोई मन को परमात्मा के अनुकूल कर लेता है। आनंद की प्राप्ति हो जाती है। जैसे कोई पदार्थों को अपने अनुकूल कर लेता है, तो सुख की प्राप्ति हो जाती है। मगर हर सुख, दुख में बदल जाता है। सारे सुख मौजूद होते हुए भी। मनुष्य दुखी है क्योंकि सुख की सीमा है। अगर आनंद मिल जाए तो कभी दुख नहीं। कारण, आनंद की कोई सीमा नहीं है। वह असीमित है। वह महारस है, महाज्ञान है, महासुगंध है। सारी सुगंध वहाँ से आती है, जो सुगंध का केन्द्र है। सम्पूर्ण सौन्दर्य वहाँ से आता है, जो संगीत का गढ़ है।

वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे॥

(जपुजी साहिब)

इसलिए उसके संगीत की कोई सीमा नहीं। उसके रूप की कोई सीमा नहीं। उसके रस की कोई सीमा नहीं। उसकी सुगन्ध की कोई सीमा नहीं। असीम

है। इसलिए आनंद सदैव बना रहता है। सदैव बना रहता है।

सतिगुरु रहमत करे हम अपने मन को प्रभु के अनुकूल कर सकें।

कल से फिर मैं कोशिश करूँगा, अनुकूल कैसे करें? श्री गुरु नानक देव जी महाराज ने, दसम पिता ने, 'मन को प्रभु के अनुकूल कैसे करें?' यह जो साधना हमारी झोली में डाली है। सभी अवतार पुरुष बहुत कुछ करते हैं कि मन को परमात्मा के अनुकूल करो तो हर एक ने अपने-अपने तरीके बनाए हैं। जो श्री गुरु नानक, श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी महाराज ने तौर-तरीका बनाया है। हमारी झोली में डाला है कि अपने मन को परमात्मा के अनुकूल करें। उपदेश तो श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के हर शब्द में मिलता है।

गुरसिख मीत चलहु गुर चाली॥
जो गुरु कहै सोई भल मानहु
हरि हरि कथा निराली॥

यह जो न्यारी कथा है। इन्द्रियों के रस से न्यारी है। संसार से न्यारी है, निराली है, असीम है। यह मन को परमात्मा के अनुकूल करते ही प्राप्त होगी, तो कैसे अनुकूल करें। जो साधना है कल तुच्छ बुद्धि के अनुसार आपके सम्मुख खोलने की छोटी-सी कोशिश करेंगे। साहिब रहमत करें। आपका सुना हुआ सफल हो। मेरा सुनाया हुआ सफल हो। सुनकर आप इस अवस्था को प्राप्त करें, सुना कर मेरी यह अवस्था बनें:

कोई गावै को सुणै हरि नामा चितु लाइ॥
कहु कबीर संसा नही अंति परम गति पाइ॥

(अंग ३३५)

सभी का बार-बार हार्दिक तौर पर धन्यवाद। भूल-चूक के लिए क्षमा।

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

इकि नामि रते रंगु लाए

वडहंसु महला ३॥

सचा सउदा हरि नामु है सचा वापारा राम॥
गुरमती हरि नामु वणजीऐ अति मोलु अफारा राम॥
अति मोलु अफारा सच वापारा सचि वापारि लगे वडभागी॥
अंतरि बाहरि भगती राते सचि नामि लिव लागी॥
नदरि करे सोई सचु पाए गुर कै सबदि वीचारा॥
नानक नामि रते तिन ही सुखु पाइआ साचै के वापारा॥ १॥
हंउमै माइआ मैलु है माइआ मैलु भरीजै राम॥
गुरमती मनु निरमला रसना हरि रसु पीजै राम॥
रसना हरि रसु पीजै अंतरु भीजै साच सबदि बीचारी॥
अंतरि खूहटा अंम्रिति भरिआ सबदे काढि पीऐ पनिहारी॥
जिसु नदरि करे सोई सचि लागै रसना रामु रवीजै॥
नानक नामि रते से निरमल होर हँउमै मैलु भरीजै॥ २॥
पंडित जोतकी सभि पड़ि पड़ि कूकदे किसु पहि करहि पुकारा राम॥
माइआ मोहु अंतरि मलु लागै माइआ के वापारा राम॥
माइआ के वापारा जगति पिआरा आवणि जाणि दुखु पाई॥
बिखु का कीड़ा बिखु सिउ लागा बिस्टा माहि समाई॥
जो धुरि लिखिआ सोइ कमावै कोइ न मेटणहारा॥
नानक नामि रते तिन सदा सुखु पाइआ होरि मूरख कूकि मुए गावारा॥ ३॥
माइआ मोहि मनु रंगिआ मोहि सुधि न काई राम॥
गुरमुखि इहु मनु रंगीऐ दूजा रंगु जाई राम॥
दूजा रंगु जाई साचि समाई सचि भरे भंडारा॥

गुरमुखि होवै सोई बूझै सचि सवारणहारा॥
आपे मेले सो हरि मिलै होरु कहणा किछू न जाए॥
नानक विणु नावै भरमि भुलाइआ
इकि नामि रते रंगु लाए॥४॥५॥

(अंग ५७०-७१)

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी! प्रभु ने अपनी जगत् रचना में एक नियम अटल रखा है कि कुछ देकर ही मिलता है, बिना दिए नहीं मिलता। ऐसा उसने नियम बना दिया है। धरती को बीज ही नहीं दिया तो धरती से हम फल नहीं मांग सकते। अगर देकर कुछ प्राप्त हो, उसे कहते हैं व्यापार। व्यापार देन-लेन पर टिका है। दुकान पर जब सौदा खरीदने जाते हैं तो हाथ से कुछ न दें तो हाथ खाली रह जाएँगे, मिलेगा कुछ भी नहीं। ऐसे कह लो, पूरा संसार प्रभु का बनाया एक बाजार है। यहाँ देकर ही कुछ मिलता है, वैसे नहीं मिलता। ऐसी उसने एक अटल नियमावली रखी है। कितना मैं धरती को हाथ जोड़ूँ, मिन्नत करूँ, तू मुझे आम दे। अगर धरती के पास ज़ुबान होती तो कह सकती थी कि तूने फिर आम का पौधा लगाना था। दिया नहीं तो मांगता क्या है? भाई गुरदास जी कहते हैं:

दिता लईए आपणा अणदिता कछु हथि न आवै॥

(वार १, पउड़ी ४७)

देने-लेने का उसने एक और नियम बनाया है। तू दे एक बीज, वह करोड़ों गुणा बढ़ कर तुझे मिलेगा। तुझे यह अहसास न हो कि मैंने दिया है तो मिलता है, तुझे यह अहसास हो कि मैंने तो एक बीज दिया था, यह तो करोड़ों फल, वृक्ष, छाया यह सब कुछ मेरे देने के कारण मुझे नहीं मिला, प्रभु तेरी कृपा से मिला है। इसलिए हर शब्द में यह कहा जाएगा, जो मिला है तेरी कृपा है।

परमात्मा एक व्यापारी नहीं है। व्यापार उसने करना होता है जिसने कुछ कमाई करनी होती है। व्यापार में ऐसा होता है कि कम दें ज्यादा मिले। ऐसा बीज भी है अगर तू कहीं बो दे। एक बार बो दें जीवन भर अनन्त काल तक तू फल खाता ही रहे। जब एक बीज से इतने फल, इतना सुंदर वृक्ष, इतने फूल तो हर एक समझदार कह देता है कि यह पेड़, यह छाया, यह फूल, हे प्रभु!

मेरा परिश्रम नहीं है, तेरी रहमत है। यह सिर्फ मेरी देन नहीं है। तेरा दान है। कहीं यह ख्याल आ जाए कि यह जो मैंने बीज दिया है, यह फलीभूत हो, बस यही मुझे मिले और उस बोए हुए बीज का सम्मान भी बड़ा हो जाए, फिर उस बीज का शायद एक बीज प्राप्त हो। और कुछ भी नहीं।

सिंध में भक्त कवर राम हुए हैं। वह नृत्य करके गुरुबाणी कीर्तन करते थे। बहुत सारी सिंधी संगत को उन्होंने शब्द को रस में गा-गाकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब से जोड़ा। जरा जरा सी व्याख्या भी करते थे। उस दिन उन्होंने व्याख्या करनी त्याग दी। कराची का एक चोटी का धनवान भक्त कवर राम के पास गया। कहने लगा, आप त्याग-त्याग की बात करते हो, मगर धन की बड़ी महिमा है। कहने लगा, जब मैं आया था तो मेरे घुटने दर्द करते थे, मुझे बैठने के लिए कुर्सी चाहिए थी। धनवान कहने लगा चार व्यक्ति बाहर कुर्सियों पर बैठे थे आंगन में। अब मैं भी नीचे नहीं बैठ सकता। अगर बैठ गया तो फिर उठ नहीं सकता। वह जो कुर्सी पर बैठा था मैंने उसे पांच रुपए दिए वह उठ गया और मैं बैठ गया। धन की यह महिमा है और आप त्याग की बात करते हो। धन के कारण इतने सुख मिल जाते हैं।

कवर राम कहने लगे- क्या धन के कारण यह सुख मिला है? हाँ। पर धन दे कर मिला है या त्याग कर मिला है। तूने पांच रुपए छोड़े हैं तो कुर्सी मिली, वैसे नहीं मिली। कहीं तू पूरे का पूरा अहंकार छोड़ दे तो निरंकार के दरबार में कुर्सी मिलेगी। दे कर मिलता है, वैसे नहीं। मगर देने से मैं अपने त्याग का अहंकार जोड़ दूँ तो शायद यहाँ भी कुर्सी न मिले। आगे की बात छोड़ो।

भाई साहिब भाई नन्द लाल एक नुक्ता पेश करते हैं जिसका उत्तर श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी महाराज देते हैं और उस से बात स्पष्ट हो जाती है। मैंने अभी दिया नहीं और मैं ऐलान करूँ, मैंने यह देना है। मेरा यह ऐलान बताता है कि इसके बदले में मुझे मिलना जरूर चाहिए। क्योंकि मैं यह ऐलान जो कर रहा हूँ। अक्सर जो दिल से देते हैं वह ऐलान नहीं करते। फूल महक बांटते हैं खामोशी से। कहते हैं जो बादल गरजते हैं वो बरसते नहीं। चुपचाप ही बरसते हैं। चुपचाप ही सूर्य इतनी रोशनी दिए जा रहा है। नन्द लाल ने तो ऐलान किया- गुफतम कि जान दें हम। हे प्रभु! एक मेरी प्रार्थना है। यह जान आपको देनी है। यह जान आपके कदमों में न्यौछावर करनी है क्योंकि सबसे कीमती मेरे पास मेरी

जान है। लगभग जब मनुष्य खतरे में हो तो पहले धन को बचाने की कोशिश करता है, परिवार को बचाने की कोशिश करता है और सबसे पहले खुद को बचाने की कोशिश करता है। जान बहुत प्यारी है। सतगुरु कहते हैं बहुत बड़े व्यापार की बदबू तुम्हारी इन बातों से आ रही है। बदले में क्या चाहिए तुम को। जान जो दे रहे हो। जान देना दान नहीं व्यापार है। उसको शूम कहते हैं, बस लेना है, मां-बाप से लेना है, भाई से लेना है, निरंकार से लेना है, सबसे लेना है, पर बदले में कुछ देना नहीं। देना ही देना मगर लेना कुछ नहीं। यह दान है ऐसा दानी सिर्फ परमात्मा है। गुरुवाणी कहती है:

ददा दाता एकु है सभ कउ देवनहार॥ (अंग २५७)

वडा दाता तिलु न तमाइ॥ (अंग ५)

पहाड़ जितना देकर जो तिल जितनी भी मांग नहीं करते। दानी सिर्फ परमात्मा है। संसार में सिर्फ व्यापार चलता है। भाई साहिब कहते हैं, तू एक मेहर की निगाह कर दे, हम जान देने को तैयार हैं। जैसे कोई सौदा खरीदने जाता है तो तोल-मोल करता है। इतना देगा तो यह लेगा। जान देनी है मगर मेहर की निगाह के बदले। मेहर की निगाह का मूल्य हो गया, क्या? एक जान। कलगीधर पातशाह कहते हैं कि नन्द लाल यह सौदा नहीं होगा। इतने सस्ते में बात नहीं बनेगी। तुम्हारी जान भी तो उसने दी है।

तेरा दीआ तुझे किया अरपउ॥

दिया तूने और तेरे आगे रख दूँ। क्या दिया? फिर कैसे मिलती है कृपा? जान तो भेंट कर दी है, धन तो भेंट कर दिया है, कामना कुछ भी नहीं। परमात्मा तुम्हारी मेहर जो तू चाहता है। कामना कोई नहीं जोड़ी, बीज दे दिया है, बहुत फलीभूत होता है।

बहुत महिमा गायन की है गुरुवाणी ने। एक भी संत ने इस तरह नहीं कहा कि नाम रस मिला है मुझे मेरे परिश्रम के कारण मगर परिश्रम किया जरूर है। एक बीज जरूर बोया है और जो एक बीज भी बोना नहीं चाहते, जब मेहर होगी जप लेंगे। इन्तजार करते रहेंगे जन्मों-जन्मों तक मगर इससे बात नहीं बनेगी। जिस कर्म के साथ में कामना जोड़ दूँ तो जितना मैंने कर्म किया है उतना ही फलीभूत होता है। उससे ज्यादा नहीं, यह दूसरा नुक्ता है। जिस कर्म से मैं कामना

जोड़ दूँ तो जितना मैंने कर्म किया है, उतना ही फलीभूत होता है। उससे ज्यादा नहीं, एक दूसरा नुक्ता है। जिस कर्म से मैं कामना जोड़ दूँ तो जितना मैंने कर्म किया है, उतना ही फलीभूत होता है। जिस कर्म से मैंने प्यार जोड़ दिया है, भावना जोड़ दी है, तुम्हारी इच्छा प्रभु, वह इतना फलीभूत होता है, जिसका अंत युगों युगों तक भी नहीं होता। कर्म से कामना जोड़ दें, कर्म गन्दा, कर्म से भावना जोड़ दें, कर्म धर्म।

दुकान पर वस्तुएँ दे रहा है तब भी बड़ी भावना के साथ दे रहा है, यह सभी प्रभु के प्रिय है। प्रभु ही मेरे पास ग्राहक बन कर आया है और प्रभु ही मुझे रोज़ी देने आया है। चाहे यह व्यापार है फिर भी धर्म है, क्योंकि भावना करके बैठा है। गुरुद्वारे बैठा है, कीर्तन सुन रहा है, वाहिगुरु वाहिगुरु जप रहा है, कामना जोड़ी हुई है, यह व्यापार ही है। एक बीज तो बीजा है पर फल की इच्छा नहीं, यह सच्चा सौदा है।

सभी जानते हैं कि 20 रुपए दिए थे पिता कल्याण दास ने गुरु नानक को। सच्चा सौदा करना, सच्चे का मतलब 20 के 40 बना कर लाना। मगर रास्ते में भूखे साधु देखकर राशन–पानी लिया है, बनाया है, खिलाया है। पिता कल्याण दास ने तो ऐसे बताया यह तो 20 गंवा के आ गया है। क्रोधित भी हुए, दो थप्पड़ भी मारे। गुरु नानक कहते हैं पिता जी, सौदा सच्चा किया है। धन के बदले धन ही मिल जाए, झूठा सौदा है। धन के बदले परमात्मा मिल जाए। सौदा सच्चा है। उससे जो मुझे आध्यात्मिक खुशी मिली है। प्रभु की प्रसन्नता मिली है। यह सौदा सच्चा है। व्यापार की निन्दा नहीं है, मगर व्यापार सच्चा हो। आज के वाक्य के चार पदे हैं। क्रमानुसार आप श्रवण करें।

वडहंसु महला ३॥

सचा सउदा हरि नामु है सचा वापारा राम॥

एक ही व्यापार है जिसको हम कह सकते हैं सच्चा व्यापार है। वह क्या? नाम का सौदा। मगर

इहु वापारु विरला वापारै॥ नानक ता कै सद बलिहारै॥

(अंग २८३)

यह व्यापार कोई करता नहीं। अन्य तो सभी व्यापार करते हैं। इस व्यापार

को सच का व्यापार क्यों कहा है? तकरीबन बाजार में जो सौदा दुकानदार देगा, जितने में उसने खरीदा है उससे कुछ ज्यादा मिले तो देगा। ग्राहक ज्यादा लेगा। जो मनुष्य लेकर आया है, ज्यादा देकर आएगा। एक परमात्मा की दुनिया ऐसी है, तू कौड़ियाँ दे कर रत्न ले कर आ जाएगा। तू झूठ को अर्पण कर दे, तुझे सच मिल जाएगा। तू क्रोध को अर्पण कर दे, तुझे दया मिल जाएगी। तू अहंकार को अर्पण कर दे, तुम्हें निरंकार मिल जाएगा, कबीर कहते हैं कौड़ी भी नहीं देनी पड़ती। यह तो लूटने की बात है, जितना लूटना है लूटो।

कबीर लूटना है त लूटि लै राम नाम है लूटि॥
फिरि पाछै पछुताहुगे प्रान जाहिंगे छूटि॥

(अंग १३६६)

धन के लुटेरों को जेल भेज दिया जाता है, नाम के लुटेरों को परमात्मा अपने सिंहासन पर बैठाता है। धन के लुटेरे तिरस्कृत होते हैं। नाम के लुटेरे सम्मानित किए जाते हैं। मनुष्य इतना नादान है कि तुच्छ दे कर भी महान् लेने को तैयार नहीं। इसलिए कोई विरला ही है जो यह व्यापार करता है। रत्न दे कर कौड़ियाँ लाने वाले तो बहुत हैं, कौड़ी बदले रत्न लाने वाला कोई विरला ही है। श्री गुरु अमरदास जी महाराज कहते हैं कि सच्चा सौदा परमात्मा का नाम है।

गुरमती हरि नामु वणजीऐ अति मोलु अफारा राम॥

जिसका कोई मूल्य नहीं, इतना महान है प्रभु का नाम। यह गुरमति को धारण करके प्राप्त होता है। भाव गुरु की सूझ-समझ के साथ ही प्राप्त होता है।

अति मोलु अफ़ारा सच वापारा सचि वापारि लगे वडभागी॥

कोई बड़े भाग्य वाले इस सच के व्यापार में लगते हैं जो व्यापार अमूल्य है।

अंतरि बाहरि भगती राते सचि नामि लिव लागी॥

यह भीतर और बाहर मन से, तन से भक्ति करते हैं। तन से सेवा करते हैं, मन से सिमरन कर रहे हैं। यह भीतर-बाहर से लीन होकर सच का व्यापार

करते हैं।

नदरि करे सोई सचु पाए गुर कै सबदि वीचारा॥

गुरु-शब्द के विचार द्वारा जो सच का व्यापार करते हैं। जिनके ऊपर मेहर हो जाती है। उनको इस व्यापार में लाभ मिल जाता है। उनको नाम की दौलत मिल जाती है।

नानक नामि रते तिन ही सुखु पाइआ साचै के वापारा॥ १॥

सच का व्यापार करते करते सच नाम में जो लीन हो गए, बस सुख उनको मिला है, दूसरों को नहीं।

हंउमै माइआ मैलु है माइआ मैलु भरीजै राम॥

दरअसल कीमत क्या चुकानी पड़ती है? अहंकार कीमत चुकानी पड़ती है मैल देकर निर्मल मिलता है।

अकबर एक दिन प्रसन्न होकर तानसेन को कहता है, तू इतना अच्छा गाता है, आनंद आ जाता है। ऐसी गहराई से गाता है कि समय को बाँध कर रख देता है। फिर तेरा गुरु कैसा होगा? वह तो तुम से भी महान् होगा? तानसेन कहने लगा, हाँ महान् है। अकबर कहने लगा, मैंने उसको सुनना है। तानसेन कहने लगा वह समय के अनुसार गाते हैं। 24 घण्टों में किसी एक समय गाते हैं। अकबर ने कहा कोई बात नहीं, तू मेरा इन्तजाम कर मैंने आठों पहर वहाँ ही रहना है। तानसेन ने प्रबन्ध कर दिया। अमृतवेला हुआ। यमुना में स्नान कर उसके किनारे बैठ कर हरिदास गाने लग गए। सूर्य निकलने तक मस्त होकर गाते रहे। अकबर ने तानसेन को कहा कि जैसा तेरा गुरु गाता है तू भी कभी इस तरह का गा कर सुना। तानसेन ने कहा ऐसा नहीं हो सकता। वह परमात्मा को सुनाने के लिए गाते हैं। मैं आपको सुनाने के लिए गाता हूँ।

हरिदास के शिष्य अनेक थे। गुरु पूर्णिमा वाले दिन सभी भेंटें लेकर आए। सभी हरिदास के कदमों में नजराने रख रहे हैं। मगर एक ऐसा भी शिष्य था जो तंबूरा बजा बजा कर गली-गली मांगता था। कपड़े फटे हुए, बे-घर। भूख जब सताती थी, तंबूरा बजा कर रोटी मांग लेता था। गुरु पूर्णिमा वाले दिन वह भी आया। भीड़ बहुत शिष्यों की। उन्होंने इसे इसके फटे कपड़े देख कर रोका।

तू कौन है? मैं भी शिष्य हूँ। मैं भी नजराना भेंट करने आया हूँ। तंबूरा ही पास था। हरिदास कहता है क्या भेंट ले कर आया है? उसने कदमों पर सिर रख कर अपनी जान दे दी और प्राण देते हुए कहने लगा, यह प्राण ही लेकर आया हूँ और कुछ भी नहीं। स्वामी हरिदास ने उस दिन अपने शिष्यों से कहा, तुमने मुझे नजराने भेंट किए। मुझ से संगीत खरीदा है मगर इसने मुझे ही खरीद लिया है। इसका देना बड़ा महान् है। नहीं तो हमेशा ऐसा होता है कि देना छोटा और लेना बड़ा।

श्री गुरु अमरदास जी फुरमान करते हैं कि गुरु की मति को धारण करके जो यह सच का सौदा करते हैं, देना तो अपना अहंकार ही होता है। मेरा धन है, मेरा तन है, मेरी कुल है, मेरी जात है, मेरी प्रभुता है। अगर देखा जाए तो कुछ भी नहीं तेरा, सब परमात्मा का है। यह जो झूठी मोहर है बस यही अर्पण करनी है और सच की मोहर मस्तक पर लगवा लेनी है। अहंकार की मैल है, माया की मैल। मेरा कुछ है तो ही मैं हूँ। अगर मेरा कुछ नहीं फिर मैं कहा? मैं टिकती है मेरे सहारे पर। जितना 'मैं मैं' बढ़े जा रहा है 'तू' के साथ संबंध टूटता जा रहा है। संसार में कुछ ऐसे भी हैं जो कहते हैं:

कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा॥

(अंग १३७५)

मेरा-मेरा करता मनुष्य 'मैं' से जुड़ जाता है, तेरा-तेरा करता मनुष्य 'तू' से जुड़ जाता है।

गुरमती मनु निरमला रसना हरि रसु पीजै राम॥

गुरु की मत को जो धारण कर लेते हैं और जुबान से प्रभु का नाम जपते हैं वह इस अहंकार को गुरु के चरणों में रख देते हैं।

रसना हरि रसु पीजै अंतरु भीजै साच सबदि बीचारी॥

भोजन का रस रसना मानती है, शुरु-शुरु में भजन का रस रसना मानती है। जपना तो जुबान से है। यह एक भावना का जगत् है। साहिब कहते हैं इस तरह के पुरुष भावना में तेरे नाम को जपते हैं और तेरे नाम का अमृत रसना से पान करते हैं।

अंतरि खूहटा अंम्रिति भरिआ सबदे काढि पीऐ पनिहारी॥

भक्त के भीतर अमृत का एक कुआं है। ऐसी कोई काया नहीं जिसके भीतर अमृत का कुआं नहीं, उसमें से ही अमृत निकालना है। किस तरह निकालना है? शब्द के जाप से। उसमें ध्यान की डोरी बांध कर शब्द के बर्तन से और शब्द को ले जाना है भीतर, फिर वह निकाल कर लाएगा अमृत को। रोम-रोम अमृतमयी हो जाएगा। दृष्टि अमृतमयी हो जाएगी। हर कर्म के ऊपर अमृत की मोहर लग जाएगी।

जिसु नदरि करे सोई सचि लागै रसना रामु रवीजै॥

जिस पर मेहर हो जाती है, वही जपता है और वही रस मानता है।

नानक नामि रते से निरमल होर हउमै मैलु भरीजै॥ २॥

जो नाम के रंग में रंगे हुए हैं, वही निर्मल हैं अन्यों पर अहंकार की मैल चढ़ी हुई है।

पंडित जोतकी सभि पड़ि पड़ि कूकदे किसु पहि करहि पुकारा राम॥

पंडित जानता तो बहुत है। रास्ते के बारे समझ बहुत है। मगर चलता नहीं। ज्योतिषी को अपने भविष्य का कुछ भी नहीं पता। सब कुछ झूठ है। रेखाएँ हाथ की, मस्तक की, पैरों की पूर्व संस्कारों के बारे में कहती हैं। फिर इस पर विश्वास करने के लिए हमें गुरमति क्यों नहीं कहती? इसलिए नहीं कहती क्योंकि वह संस्कार बने थे कर्मों की वजह से और संस्कारों की वजह से रेखाएँ बनी थीं। अगर अब शुभ कर्म करें तो बुरी रेखाएँ मिट जाएँगी। बुरे कर्म करेंगे तो जो अच्छी रेखाएँ हैं वह मिट जाएँगी। रेखाएँ रोजाना बदलती हैं। फिर रेखा का ज्ञान झूठा, ज्ञान कर्मों का सही है। कर्मों से रेखाएँ बनती हैं। फिर मैं अपने कर्म की चिन्ता करूँ। इसलिए गुरमति कहती है ज्योतिष झूठ है रेखाएँ मिट जाती हैं कर्म नहीं मिटते।

माइआ मोहु अंतरि मलु लागै माइआ के वापारा राम॥

फिर इतना क्यों पढ़ते हैं? क्यों पंडित बनते हैं? फिर क्यों भविष्य बताते हैं? दरअसल किसी को सुख देने के लिए भविष्य नहीं बताते। परमात्मा तक

पहुँचने के लिए नहीं पढ़ते। यह इनका धन्धा है। सच का सौदा नहीं है। माया का व्यापार है।

माइआ के वापारा जगति पिआरा आवणि जाणि दुखु पाई॥

बहुत प्यार है इस माया से तथा माया का व्यापार है, इससे जन्म चलता रहता है। मरण चलता रहता है।

बिखु का कीड़ा बिखु सिउ लागा बिस्टा माहि समाई॥

यह विष्ठा का कीड़ा, गंदगी का कीड़ा, पैदा गन्दगी में हुआ है, फिर गन्दगी से निकल नहीं सका। गन्दगी को खुराक बना लिया, उसमें ही रह गया। यह तो भविष्य की चिन्ता में खुद फँसा हुआ है और अन्यों को फँसा कर रह गया है। इससे आगे नहीं जा सका।

जो धुरि लिखिआ सोइ कमावै कोइ न मेटणहारा॥

जो संस्कारों से लिखा हुआ था उससे विपरीत कर्म किए नहीं। कर्म मिटाए जा सकते हैं, संस्कार मिटाए जा सकते हैं। कर्म और संस्कार मिल कर जब स्वभाव बन जाता है फिर आदत बन जाती है, नहीं मिटाए जा सकते। महाराज कहते हैं, जो प्रारम्भ से संस्कारों में लिखा है वही अक्सर मनुष्य करते हैं, नई खोज नहीं करते, अच्छी संगत नहीं करते।

नानक नामि रते तिन सदा सुखु पाइआ
होरि मूरख कूकि मुए गावारा॥ ३॥

और तो कूक-कूक कर गवार लोग मर रहे हैं, जन्म ले रहे हैं, मगर जो नाम के रंग में रंगे हुए हैं, उन्होंने रस माना है और जन्म-मरण के चक्र से बच गए हैं।

माइआ मोहि मनु रंगिआ मोहि सुधि न काई राम॥

माया का ऐसा रंग चढ़ा है कि अब बुद्धि भी काम नहीं करती। भाव बुद्धि पर भी माया का प्रभाव है। प्रभु का प्रभाव नहीं। अब पदार्थों और धन के लिए परमात्मा छोड़ा जा रहा है।

गुरमुखि इहु मनु रंगीऐ दूजा रंगु जाई राम॥

मगर जो गुरु की मत धारण कर लेता है, उसके ऊपर फिर नाम का रंग चढ़ जाता है, माया का रंग उतर जाता है।

दूजा रंगु जाईं साचि समाईं सचि भरे भंडारा॥

उनका हृदय सच से भर जाता है, गुरु की मत को धारण करके और माया का रंग उतर जाता है।

गुरमुखि होवै सोई बूझै सचि सवारणहारा॥

मगर जो गुरु की मत धारण करता है, गुरुमुख होता है उसको यह समझ आती है।

आपे मेले सो हरि मिलै होरु कहणा किछू न जाए॥

ऐसे पुरुषों को परिपूर्ण परमात्मा स्वयं ही मिला देता है। और इसके अलावा मिलाने वाला कोई नहीं है। यह कुछ कहना नहीं पड़ता।

नानक विणु नावै भरमि भुलाइआ
इकि नामि रते रंगु लाए॥ ४॥ ५॥

एक वह है जो नाम के रंग में रंगे हुए हैं और एक वह हैं जो भ्रम में भूले हुए हैं। भटक रहे हैं। साहिब रहमत करें, भूल-चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

उतम संत भले संजोगी

धनासरी महला ५

जिह करणी होवहि सरमिंदा इहा कमानी रीति॥
संत की निंदा साकत की पूजा ऐसी द्रिढ़ी बिपरीति॥१॥
माइआ मोह भूलो अवरै हीत॥
हरिचंदउरी बन हर पात रे इहै तुहारो बीत॥१॥रहाउ॥
चंदन लेप होत देह कउ सुखु गरधभ भसम संगीति॥
अंम्रित संगि नाहि रुच आवत बिखै ठगउरी प्रीति॥२॥
उतम संत भले संजोगी इसु जुग महि पवित पुनीत॥
जात अकारथ जनमु पदारथ काच बादरै जीत॥३॥
जनम जनम के किलविख दुख भागे गुरि गिआन अंजनु नेत्र दीत॥
साधसंगि इन दुख ते निकसिओ नानक एक परीत॥४॥५॥
(अंग ६७३)

वाहिगुरु जी का खालसा।। वाहिगुरु जी की फतह।।

सम्मान योग्य गुरु रूप साध संगत जी! इस वाक्य में मेरे गुरु ने कर्म प्रधानता का जिक्र किया है। कर्म की जिम्मेदारी सिर्फ मनुष्य के ऊपर लागू है, पशुओं के ऊपर नहीं, कर्म की जिम्मेदारी सिर्फ मनुष्य के ऊपर लागू होती है, पक्षियों के ऊपर नहीं, वनस्पति के ऊपर नहीं, पत्थरों के ऊपर नहीं। मनुष्य में जो बालक है, एक साल का, दो वर्ष का है, तीन वर्ष का है उनके ऊपर भी कर्म की जिम्मेदारी लागू नहीं होती।

कुछ वर्ष हुए एक चार वर्ष के बच्चे ने अपनी सोई हुई मां के मुँह में जहर डाल दिया था। शीशी में पड़ी थी दवाई जहरीली। मां मर गई। वह मासूम बच्चा कहता रहा कि पता नहीं मां को मैंने यह पिलाया है। मां सो गई। जांच करने के पश्चात पता चला कि मां को जहर पिला दिया है। मासूम, ना-समझ, उसको

न तो अदालत सजा दे सकती थी और न समाज। उसको कातिल करार नहीं किया जा सकता। कोई भी अदालत तीन चार वर्ष के बच्चे को सजा नहीं दे सकती क्योंकि जहाँ पशु अचेत हैं, मासूम बच्चा भी अचेत है।

महाराज कहते हैं– 'बालिग बुद्ध अचेत'। कर्म की जिम्मेदारी अचेत पर लागू नहीं होती। कितना अनर्थ पशु करते हैं। मगर न हम उनको बेईमान कहते हैं, न उनको दुराचारी कहते हैं, न उनको चोर कहते हैं। जंगल के हिरण खेत खा जाते हैं, शेर मनुष्यों पर हमला कर देते हैं, सांप व्यक्तियों को डंक मार देते हैं। मां चल रही है और बच्चा भी चल रहा है। बच्चा खुद नहीं चल रहा, मां का चलाया चल रहा है। अचेत है, अचेत को प्रकृति चला रही है। चलती चलती मां कहीं गिर पड़ी है, उसको चोट लग गई है, बच्चे को भी चोट लग गई है। यह जिम्मेदारी भी प्रकृति की है, उस बच्चे की नहीं, वह मां की गोद में था अचेत। पशु जो कुछ भी करते हैं, कोई पशु जिम्मेदार नहीं है।

रूह–ए–जमीन में सिर्फ एक मनुष्य ही है, जो इतना सुचेत हो गया है कि कर्म को समझ जाता है। मालूम है इसको कि मैं आग में हाथ डालूँगा तो हाथ जल जाएगा। मालूम है इसको कि मैं जहर पीऊँगा तो मर जाऊँगा। इसलिए अगर कोई मनुष्य अनर्थ करता है और यह कहे मुझे मालूम नहीं था मगर गुरुवाणी ऐसा नहीं मानती।

कबीर मनु जानै सभ बात जानत ही अउगुन करै॥
काहे की कुसलात हाथि दीपु कूए परै॥

(अंग १३७६)

जैसे पशुओं को उपदेश देने की आवश्यकता नहीं है, अचेत हैं। पक्षियों को कथा सुनाने की आवश्यकता नहीं, अचेत हैं, वनस्पति को संदेश उपदेश की आवश्यकता नहीं, अचेत हैं, अगर मनुष्य भी पूर्ण अचेत है तो फिर कथा कीर्तन क्यों सुनाएँ? इतने अवतार पुरुषों ने क्यों परिश्रम किया?

मनुष्य इतना सुचेत अवश्य हो गया है कि कर्म को समझता है, परंतु मनुष्य थोड़ा बहुत तन के प्रति सुचेत है मन के प्रति नहीं। मन हमारा सूक्ष्म शरीर है और यह प्राणों के सहारे रुका है। इसलिए सूक्ष्म शरीर को कई वायु भी कह देते हैं। जितना हम खाते–पीते हैं। इस स्थूल शरीर में चला जाता है। जितना सोचते विचारते देखते हैं, वह सूक्ष्म शरीर में जाता है।

हमारे दो शरीर हैं- सूक्ष्म और स्थूल। बाबा रामराय साहिब श्री गुरु हरिगोबिन्द साहिब के बड़े पुत्र ने अपनी पत्नी को कहा मैं इस शरीर में से जा रहा हूँ कुछ दिनों के लिए, शायद पांच दिनों के लिए। पांच दिनों के लिए तुम मेरे इस शरीरं की संभाल करना। यह कथा है गुरमति के इतिहास में। दो दिन तक पूरी हिफाजत करती रही और मसंदों को इस घटना का पता चल गया और मसंद वैसे ही गुरुघर से टूट कर बाबा पृथ्वीचंद से जुड़े हुए थे, उसके बाद बाबा रामराय के साथ। जिन मसंदों की स्थापना गुरु अमरदास जी महाराज ने की थी। मसंद 22 थे। इनमें से तीन स्त्रियाँ थीं और 19 पुरुष थे। महाराज ने प्रचार की जिम्मेदारी इनको सौंपी। मगर जो गुरमति का प्रचार करे, प्रबन्ध करे, जगह-जगह और दूर-दूर जाए तो संगतों ने बहुत ज्यादा सम्मान किया। अनेकों को धन हजम नहीं होता, अनेकों को प्रभुता भी हजम नहीं होती। ऐसा कौन-सा मनुष्य है जिसको प्रभुता मिले और अहंकारी न हो। ऐसा कौन सा मनुष्य है जिसको अच्छा धन मिल गया और अहंकारी न हो? ऐसा कौन-सा मनुष्य है जिसको अच्छा शक्तिशाली पद मिल गया है और अहंकारी न हो? प्रभुता इनसे हजम न हुई और अहंकारी हो गए। गुरु घर से टूट गए। इनमें से बहुत खुद ही गुरु बन गए। इस प्रथा को गुरु गोबिन्द सिंघ जी ने खत्म कर दिया था। मसंदों ने बाबा रामराय की अर्थी बना ली। पत्नी रोती रही कि मुझे कह गए हैं कि पांचवें दिन मैं वापिस आऊँगा, मेरे शरीर की संभाल करना, मैं बाहर जा रहा हूँ। इससे स्पष्ट है कि सूक्ष्म शरीर अलग है। वह एक वायु है।

कहते हैं 100 वर्ष पहले बनारस का राजा भी इस तरह कर लेता था, बड़ा धार्मिक था। आदि शंकराचार्य जो हुआ है, वह भी ऐसे कर लेता था। बड़े-बड़े योगी भी कर लेते हैं। सूक्ष्म शरीर जो मन लगाकर सुना गया है, सुना हुआ सूक्ष्म शरीर में चला जाएगा संस्कारों के रूप में। जैसे हमारे कंठ में जो निवाला जाता है, चबाने के पश्चात वही खून बनता है, वही मांस बनता है। मन लगा कर हम जो पढ़ते, देखते, सुनते हैं, उसको मन ने मान लिया, वह फिर सूक्ष्म शरीर में संस्कारों के रूप में समा जाता है।

जहाँ सभी का स्थूल शरीर अलग-अलग है, सूक्ष्म शरीर भी अलग-अलग है। जहाँ यह शरीर अलग-अलग है, संस्कारिक शरीर भी अलग-अलग है। कहते हैं मसंदों ने अर्थी बना ली, चिता पर रख दिया, आग लगा दी। बाबा राम राय का आधे से ज्यादा शरीर जल गया, उसके पश्चात उनका सूक्ष्म शरीर

वापस आया। कहते हैं आवाज आई। हे मसंदो! तुमने मुझे जिन्दा जलाया है, गुरु तुम्हें जिन्दा जलाएगा। श्राप दिया। इन मसंदों को फिर जिन्दा जला कर मारा गया था। इसका मतलब है सूक्ष्म शरीर अलग है, स्थूल शरीर अलग है। दो शरीर है–तन और मन। सूक्ष्म शरीर में प्रभु का नाम, ज्ञान, आत्म तत्व ज्यादा समा जाए तो यह फिर धीरे–धीरे इस स्थूल शरीर से अपना नाता तोड़ने लग जाता है। इस स्थूल शरीर को बोझ समझने लगता है कि यह तो मैं जेल में हूँ, यह तो मुझे हथकड़ियाँ लगी हुई हैं। इस तरह के पुरुष इस इन्तजार में रहने लगते हैं कई बार। दो तरह के ऐसे मनुष्य होते हैं एक तो परोपकार के लिए सोचते हैं। चलो यह स्थूल शरीर रहे जितना ज्यादा से ज्यादा परोपकार कर सकें। कुछ ऐसे जो इसमें रूचि नहीं रखते और कहते हैं कि जल्दी यह खत्म हो। वह मृत्यु को पूर्ण आनंद समझने लगते हैं। यह जरा सा बंधन भी गया।

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरै मनि आनंदु॥

(अंग १३६५)

यह वही कह सकता है जिसका सूक्ष्म शरीर का संबंध स्थूल शरीर से टूट चुका है। जहाँ सत्संग हो, प्रभु–नाम का सिमरन, जप, तप, कथा–कीर्तन वहाँ हमेशा ऐसे सूक्ष्म शरीर मौजूद होते हैं। जिनके स्थूल शरीर तो जला दिए गए मगर प्रभु में लीन नहीं हो सके। वह फिर दूसरे स्थूल शरीर में पड़ेंगे। जैसे स्थूल शरीर जिनके पास हैं इनमें से बहुत से 'नेक' हैं बहुत से 'बद' हैं। कई बहुत भयानक हैं और इनको व्यक्ति कहता है यह नज़र न आएं तो अच्छा है।

फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिओनु नाउ॥
ऐथै दुख घणेरिआ अगै ठउर न ठाउ॥

(अंग १३८३)

कबीर कहते हैं कि डरते ही रहना चाहिए। मालूम नहीं क्या करते हैं? हे खुदा! डरता हूँ मैं तुम से। फिर मैं डरता हूँ उनसे जो तुम से नहीं डरते। कबीर जी कहते हैं–

थरहर कंपै बाला जीउ॥ ना जानउ किआ करसी पीउ॥

(अंग ७९२)

पता नहीं प्रभु ने क्या करना है? शरीफ मनुष्य अपने घर के दरवाजे बदमाशों के लिए बन्द रखते हैं। यह हमारे घर नहीं आने चाहिए। जैसे बुरे स्थूल शरीर

होते हैं, उससे एक बात स्पष्ट हो गई कि उनके सूक्ष्म शरीर भी बहुत बुरे हैं। जो बुरे काम करते रहे हैं उसके संस्कार सूक्ष्म शरीर में जमा होते गए। जो खाते रहे वह अस्थूल स्वरूप में खून बनता गया और बुरा ही देखते रहे।

दृष्टि दो प्रकार की होती है- दोष दृष्टि और निर्मल दृष्टि। जिस मनुष्य की दोष दृष्टि है, उसको कहीं भी कुछ अच्छा दिखाई नहीं देगा। यह भी बुरा है, वह भी बुरा है क्योंकि हर एक में बुरा ही दिखाई देता है। फिर बुरा दिखाई देने की वजह से सभी दुश्मन दिखाई देते हैं। शुभ दृष्टि किसकी होती है? जिस का सूक्ष्म शरीर शुभ होता है। जिसके संस्कार बड़े शुभ होते हैं और संस्कार बनते हैं कर्मों की वजह से, जिसके कर्म बहुत शुभ होते हैं। पहचान क्या होती है? उसकी दृष्टि बहुत शुभ होती है। वह हर एक में शुभ देखता है, शुभ देखना उसका स्वभाव है, क्योंकि शुभ है। दोष देखना उसका स्वभाव है, क्योंकि संस्कारों में दोष है, दुष्ट है।

ऐसा भी होता है कि यह दोष दृष्टि किसी-किसी के प्रति शुभ दृष्टि हो। दोस्त है, जान से भी प्यारा है। अब उसके प्रति दृष्टि शुभ है। सभी कुछ उस में अच्छा दिखाई देता है। क्यों? मित्र है। वह गलतियाँ भी करे तो गलतियाँ दिखाई नहीं देतीं। वह गलत भी बोले अच्छा लगता है। मित्र में मनुष्य शुभ ही शुभ देखता है। शुभ देखने की वजह मित्रता बनी हुई है। किसी कारण झगड़ा हो गया तो अहंकार, स्वार्थ टकरा गए तो मित्रता दुश्मनी में बदल गई। अब वह जो शुभ दृष्टि थी, दोष दृष्टि हो गई। उसमें अब बुरा ही बुरा दिखाई देता है। इसका मतलब यह नहीं कि उसमें कुछ गुण नहीं हैं, अच्छाई नहीं हैं, हैं मगर अब दृष्टि दोष हो गई है। पहले दृष्टि शुभ थी क्योंकि मित्र थे। अब दृष्टि दोष हो गई है, क्योंकि दुश्मनी हो गई है। दोष-दृष्टि दुश्मनों को जन्म देती है। शायद उसके बच्चे, उसका पिता, उसका भाई, उसकी मां वह भी उसको अपने दिखाई नहीं देंगे। दोष-दृष्टि रखने वाले के लिए सारा संसार दुश्मन ही दुश्मन है। शुभ दृष्टि रखने वाले के लिए सारा संसार ही सज्जन है। कहते हैं परमात्मा सिर्फ उनका सज्जन बनता है और परमात्मा को वही सज्जन बनाने में सफल होते हैं जो पहले संसार को सज्जन बना लेते हैं। यह एक शर्त है जिसने इन्सान को सज्जन नहीं बनाया। मुश्किल है भगवान को सज्जन बना सके। जब एक नज़र होकर किसी के पैर देखोगे, फिर उसका मस्तक नहीं देख सकोगे। जब एक नज़र होकर किसी का मुख-मस्तक देखोगे, फिर पैर नहीं देख सकोगे।

दृष्टि पैर और मुख एक ही समय नहीं देख सकती।

लक्ष्मण से पूछा गया था कि सीता के कण्ठ में हार कौन सा था? उनके कानों में बालियां कौन सी थीं? लक्ष्मण कहता है मैं इतना तो बता सकता हूँ कि पांवों में पायल किस तरह की थी। कण्ठ में हार कैसा था, मैंने नहीं देखा। मैंने चरणों के सिवा कभी ऊपर देखा ही नहीं। दुश्मन में हम दृष्टि उसके पैरों पर रखते हैं। अवगुण ही अवगुण दिखाई देते हैं। दृष्टि की सीमा इसका यह मतलब नहीं कि उस दुश्मन का चेहरा नहीं है। मित्रता में हम दृष्टि उसके मुख पर रखते हैं, पांव दिखाई नहीं देते और पुरजोर हम कहते हैं कि इसमें कोई अवगुण नहीं। शुभ दृष्टि का मतलब उसकी बुलंदियों को देख रहे हैं। दोष-दृष्टि का मतलब उसकी नीचता देख रहे हैं।

दृष्टि की अपनी एक सीमा है। डाकू में भी कुछ गुण होते हैं और कुछ न कुछ अवगुण गुरुमुख में भी होते हैं। साधना करते-करते जिस मनुष्य की कर्म रेखा इतनी पावन हो जाए, उसका सूक्ष्म शरीर पवित्र हो जाता है। सूक्ष्म शरीर में पड़े हैं जन्मों-जन्मों के संस्कार, गुस्ताखी माफ़! 99 प्रतिशत वह संस्कार बुरे हैं। सिर्फ 1 प्रतिशत ठीक होंगे। किसी किसी का स्थूल शरीर भी इतना कुरूप होता है कि देखने को मन नहीं करता। इस तरह का हजारों में एक-आध होता है। गुस्ताखी माफ़ मन इतना सुन्दर हो कि देखने को मन करे। यह कोई करोड़ों में एक आध होता है। मन तो सभी के करूप होते हैं। अगर सूक्ष्म शरीर इस जन्म में बहुत कुरूप कर दिया। इस मनुष्य का अगला जन्म जो होगा इसको स्थूल शरीर भी सुन्दर नहीं मिल सकता।

जिह प्रसादि तेरा सुंदर रूपु।। सो प्रभु सिमरहु सदा अनूपु।।

(अंग २७०)

सूक्ष्म शरीर यह 90 प्रतिशत पावन हो गया है और सिर्फ 10 प्रतिशत इसमें संस्कार मैले बचे हैं और स्थूल शरीर का अन्त हो गया है। सूक्ष्म और स्थूल का नाता टूट गया क्योंकि स्थूल शरीर कुछ समय के लिए मिला है। विद्वान कहते हैं अस्थूल शरीर की मृत्यु होती है तीन वस्तुओं के जोड़ से- स्थान, समय और कारण। निश्चित है स्थान, समय और कारण। वह जो सूक्ष्म ढांचा है, वह कहाँ जाए? उसके लिए सिर्फ दो रास्ते हैं या तो परमात्मा में लीन हो या फिर स्थूल शरीर को प्राप्त करे। परमात्मा में तो वह लीन होता है जो 100 प्रतिशत निर्मल हो जाए।

दाग दोस मुहि चलिआ लाइ।। दरगह बैसण नाही जाइ।।

(अंग ६६२)

यह तो दागी है। यह ज्योति में ज्योति नहीं हो सकता। यह बड़ा दोषी है।

नामु धिआइनि साजना जनम पदारथु जीति।।
नानक धरम ऐसे चवहि कीतो भवनु पुनीत।।

(अंग १४२५)

परमात्मा भी कह देता है कि ठीक है, घर पवित्र था, मगर हे संत! तुम्हारे आने से अधिक पवित्र हो गया है। जो 90 प्रतिशत निर्मल हैं। इनको देवता कहते हैं। जो 99 प्रतिशत दागी हैं इनको भूत-प्रेत कहते हैं सूक्ष्म और स्थूल का संबंध टूट जाए तो यह दोनों ही भटकते हैं, कारण? यह 99 प्रतिशत दागी हैं, अब 99 प्रतिशत दागी मां चाहिए। उसकी कोख के रास्ते आ सकता है, दूसरी के रास्ते नहीं। सांस्कारिक ढांचा मिलते जुलते संस्कारों की तरफ ही जाता है। तन की मैल है गर्दो-गुब्बार, सूक्ष्म शरीर की मैल है गलत विचार, गलत संस्कार। हर गलत जगह पर यह भूत-प्रेत होते हैं। भूत-प्रेत से तात्पर्य कुछ भी नहीं, गलत संस्कार, पशुओं की तरह जो जीए। पशु कहते हैं जो पिछड़े हुए हैं, जो पीछे हैं और भूत के अर्थ क्या हैं। गुजरा हुआ पिछला समय भूतकाल। मनुष्य है मगर कार्य पशुओं के। हद हो गई। पशुओं को पीछे छोड़ आए हो। मनुष्यों वाले काम करो। मनुष्य हो कर यह पशुओं जैसे काम कर रहा है। यह पिछड़ा हुआ है। कबीर कहते हैं-

अमृत समय उठना नहीं, प्रभु के नाम का जप नहीं, सत्संग नहीं। कबीर कहते हैं- उस घर को घर कहने की क्या आवश्यकता है? श्मशान घाट है और रहने वालों को मनुष्य कहने की क्या आवश्यकता है? भूत-प्रेत हैं। दोष दृष्टि मनुष्य का तालमेल अश्लील साहित्य के साथ होगा, सुखमनी साहिब से इसका तालमेल नहीं होगा। आज जितना अश्लील साहित्य सारी दुनिया में छपा है इतना अश्लील साहित्य पहले नहीं था। घर-घर में यही पढ़ा जा रहा है। टेबल पर वही मैगजीन मिलेंगे कौन पढ़ता है अब पोथियाँ और धर्मग्रंथ। इसलिए गुरु की वाणी ने कह दिया कि घरों में अब मनुष्य थोड़े ही हैं, भूत-प्रेत बहुत ज्यादा हैं। नाराज न होना, धार्मिक मन्दिरों में अब भक्त बहुत कम हैं, भूत-प्रेत बहुत ज्यादा हैं। आप कहेंगे यह भूत-प्रेत मन्दिरों में कैसे आ गए? यह भूत-प्रेत

मंदिरों में चोरी करने के लिए आते हैं, चप्पलें चुराने के लिए आते हैं, दान-पात्र हथियाने के लिए आते हैं, अन्य सांसारिक स्वार्थ के लिए आते हैं, गुरु के लिए नहीं आते। इसके साथ उनका कोई मतलब नहीं। इस वाक्य के आखिरी अर्थ आप श्रवण करें।

धनासरी महला ५॥

जिह करणी होवहि सरमिंदा इहा कमानी रीति॥

जिस कर्म के साथ, जिस कृत्य के साथ अन्त को तूने प्रभु के दरबार में शर्मसार होना है और हर किए कर्म का फल आखिर दुख निकलना है। तुम वही कुछ करे जा रहे हो:

संत की निंदा साकत की पूजा ऐसी द्रिढ़ी बिपरीति॥ १॥

संत को पूरा दिन कोसता रहता है। अवतारों की तू निन्दा करता रहता है और शाकतों की करता है पूजा। उनको तू सलाम करता है। उनको महान कहता है। शक्ति के उपासक सांसारिक, धन ज्यादा है, प्रभुता ज्यादा है। उनकी तो पूजा करता है मगर जिसके पास दैवी गुण हैं, उनकी निन्दा करता है। पैमाने मनुष्य के मनुष्य को नापने के बदल गए हैं। मनुष्य को नापा-तौला जाता है कि उसकी प्रभुता कितनी है? इसके पास धन कितना है? अगर धन, प्रभुता ज्यादा है तो सलाम करो। दया ज्यादा है, निरवैरता ज्यादा है, ज्ञान ज्यादा है, प्रेम ज्यादा है, सम-दृष्टि ज्यादा है तो यह सभी कुछ क्या मायने रखते हैं? कुछ भी नहीं। इस तरह ही बुरी रीति चल रही है।

माइआ मोह भूलो अवरै हीत॥

माया ने ऐसा मोहित किया है, इसके सभी आध्यात्मिक गुण छीन लिए गए हैं, गलत तरफ चला दिया है।

हरिचंदउरी बन हर पात रे इहै तुहारो बीत॥ १॥ रहाउ॥

वास्तव में तेरी हालत क्या है? जैसे जंगल का पत्ता है, इसकी क्या कीमत है? टूट कर जगह-जगह के धक्के खा रहा है। फिर हरिचंदउरी आकाश नगरी यह तो एक कल्पना है। तू एक स्वप्न मात्र है। आज नहीं तो कल टूट जाएगा,

संसार के पेड़ से। पतझड़ की ऋतु में पत्ता पेड़ से टूट गया, फिर नहीं जुड़ सकता। वायु उस पत्ते को दूर-दूर तक भटकाएगी। हे मनुष्य! सत्संग से टूट गया है। अब वासना की हवा मालूम नहीं कितने जन्मों में तुम्हें परेशान करेगी।

चंदन लेप होत देह कउ सुखु गरधभ भसम संगीति।।

जैसे गधे को चन्दन का लेप करें तो फिर भी वह मिट्टी में ही लेटता है। मनुष्य तन मिला है मगर मनुष्य तन मिला होने पर कार्य पशुओं जैसे। कितनी भी गुरुवाणी सुना दें मगर आदत में गधापन। जीवन के सार को नहीं समझता।

अंम्रित संगि नाहि रुच आवत बिखै ठगउरी प्रीति।। २।।

प्रभु का नाम अमृत है इसमें उसकी रूचि नहीं है बस जहर पीने में रूचि है।

उतम संत भले संजोगी इसु जुग महि पवित पुनीत।।

संतजनों का संयोग ही भला संयोग है और उनकी संगत में बैठ कर प्रभु की कीर्ति करनी यही अच्छी रीति है।

जात अकारथ जनमु पदारथ काच बादरै जीत।। ३।।

यह एक पदार्थ मिला है, जीवन महान्, जो व्यर्थ जा रहा है। कांच के बदले में जा रहा है। चलो मोतियों के बदले में जाए, हीरे के बदलें में जाए। नाम का हीरा मिल गया, जीवन चला गया। कोई बात नहीं। जीवन चला गया, मिला कांच है। जीवन की बाजी हार गया।

जनम जनम के किलविख दुख भागे
गुरि गिआन अंजनु नेत्र दीत।।

गुरु ने ऐसा ज्ञान का सुरमा आँखों में डाला है, जन्मों-जन्मों के दुख मिट गए हैं। संताप मिट गए हैं।

साधसंगि इन दुख ते निकसिओ नानक एक परीत।। ४।। १।।

साध-संगति में बैठ कर गुरु की संगत में बैठ कर प्रभु का प्यार प्राप्त हुआ और उनके कारण इन दुखों से बच गए। इस जहर से बच गए। भूल भाव वह

कर्म जिसने अन्त को सिर्फ शर्मसार होने के और कुछ भी नहीं देना मगर यह नहीं समझना जो किया है, कर छोड़ा है नहीं।

करि करि करणा लिखि लै जाहु॥ (अंग ४)

जो किया है वह लिखा गया है। मन वश जो-जो किया है, देखा, सुना, बोला, पढ़ा है, वह लिखा गया है। कर के छोड़ना, तुम्हारे बस की बात नहीं, अनर्थ करके तू छोड़ नहीं सकता, वह तो लिखा गया। इस तरह के बुरे कर्म न कर। साहिब रहमत करें। भूल चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा।। वाहिगुरु जी की फतह।।

सभु किछु कीता तेरा वरतै

सोरठि महला ५ घरु १ तितुके
१ ओं सतिगुरु प्रसादि॥

किसु हउ जाची किसु आराधी जा सभु को कीता होसी॥
जो जो दीसै वडा वडेरा सो सो खाकू रलसी॥
निरभउ निरंकारु भव खंडनु सभि सुख नव निधि देसी॥ १॥
हरि जीउ तेरी दाती राजा॥
माणसु बपुड़ा किआ सालाही किआ तिस का मुहताजा॥ रहाउ॥
जिनि हरि धिआइआ सभु किछु तिस का तिस की भूख गवाई॥
ऐसा धनु दीआ सुखदातै निखुटि न कब ही जाई॥
अनदु भइआ सुख सहजि समाणे सतिगुरि मेलि मिलाई॥ २॥
मन नामु जपि नामु आराधि अनदिनु नामु वखाणी॥
उपदेसु सुणि साध संतन का सभ चूकी काणि जमाणी॥
जिन कउ क्रिपालु होआ प्रभु मेरा से लागे गुर की बाणी॥ ३॥
कीमति कउणु करै प्रभ तेरी तू सरब जीआ दइआला॥
सभु किछु कीता तेरा वरतै किआ हम बाल गुपाला॥
राखि लेहु नानकु जनु तुमरा जिउ पिता पूत किरपाला॥ ४॥ १॥

(अंग ६०८)

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

सम्मान योग्य गुरु रूप साधसंगत जी! लोभी मनुष्य मरते दम तक अधूरा ही रहता है। संसार में पूर्ण शांतमयी जीवन वही जीते हैं जो जरूरतों में जीएं, लोभ में नहीं। जरूरतें पूरी हो जाती हैं, लोभ नहीं पूरा होता। जरूरतों की पूर्ति करने के तीन साधन हैं, पहला साधन श्रम करना, दूसरा साधन मांगना, तीसरा साधन छीनना है। श्रम करके जरूरतों की पूर्ति करनी, मांग कर जरूरतों की पूर्ति करनी, छीन कर जरूरतों की पूर्ति करनी। जो परिश्रम करके आवश्यकताओं

की पूर्ति करते हैं, उनको कहते हैं 'परिश्रमी'। जो मांग कर जरूरतों की पूर्ति करते हैं, उनको कहते हैं 'भिखारी'। जो छीन कर, लूट कर जरूरतों की पूर्ति करते हैं, उनको कहते हैं चोर, लुटेरे, डकैत।

संसार में यह तीनों मौजूद हैं, यह ठीक है कि बड़ा वर्ग परिश्रमियों का है, मगर भिखारियों का वर्ग भी कम नहीं है। लुटेरों का वर्ग भी कम नहीं है। ऐसे भी दुनिया में अवतारों के द्वारा व्यापक नुक्ते आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पेश हुए, उन्होंने मध्य का मार्ग चुना। परिश्रम नहीं करना, छीनना भी नहीं, भिक्षु बना दिए, मांगना है, आपके ज्ञान के लिए अर्ज़ करूँ, अलग-अलग अवतारों के जो अनुयायी हैं, उनको यथावत नाम दिए हैं, जैसे इस्लाम के संस्थापक मुहम्मद साहिब ने अपने अनुयायी को मुसलमान कहा। महात्मा बुद्ध ने अपने अनुयायी को भिक्षु कहा। गुरु नानक देव जी महाराज के साथ जिस उम्मत का जन्म हुआ, उसको सिक्ख कहा गया। सनातन मत हिन्दू धर्म की एक शाखा नहीं है, यह ऐसा दरिया है जो कई शाखाओं में बहता है। सन्यासी हैं, बैरागी हैं, ब्रह्मचारी हैं, इनके कई रूप हैं। फिर जितने इष्ट हैं, उतनी धाराएँ हैं। किसी का इष्ट शिव, किसी का श्री राम, किसी का कृष्ण। यह धारा मेल भी नहीं खाती। देश के प्रसिद्ध लेखक, भक्त, विद्वान, महात्मा तुलसी जैसे मथुरा में आए रमायण की कथा करने तो अब स्वाभाविक बात है। मथुरा नगरी श्री कृष्ण की है, जैसे अयोध्या श्री राम की है। जैसे अमृतसर को हम रामदासपुरी कहते हैं। मथुरा में आए तो महात्मा तुलसी को ले गए श्रद्धालु इनको श्री कृष्ण जी के मन्दिर में, द्वारिकाधीश मन्दिर में। सभी ने माथा टेका, तुलसी ने नहीं टेका, पूछा गया आप भक्त हो और सिर्फ भक्त ही नहीं, भक्ति का संदेश भी देते हो। कथावाचक हो, सिर्फ कथावाचक नहीं, आप बहुत बड़े विद्वान हो, लेखक हो मगर आपने माथा नहीं टेका। तुलसी कहते हैं-

कैसी सुंदर छब्ब बनी भले बिराजे नाथ॥

बड़ी सुन्दर मूर्ति है। होठों से मुरली लगाई हुई है, सिर पर मुकुट है। बड़ी सुन्दर पोशाक है, बड़े कीमती जेवर हैं। मगर

तुलसी मस्तक तो निवे जो धनुष बाण होए हाथ॥

तुलसी का सिर तब झुक सकता है अगर हाथ में धनुष बाण हो। मैं धनुषधारी

का पुजारी हूँ, मुलरीधर का पुजारी नहीं।

धर्म ग्रंथों के विचार भी अलग-अलग है। जैसे श्री गुरु नानक देव जी महाराज कहते हैं-

छिअ घर छिअ गुर छिअ उपदेस॥

शास्त्र तो छः हैं। इन छः शास्त्रों के रचियता गुरु भी छः हैं। न्याय को जन्म देते हैं, गौतम, सांख्य को जन्म देते हैं कपिल, मीमांसा को जन्म देते हैं जैमिनी, योग को जन्म देते हैं पतंजलि और इसी तरीके से वेदांत को जन्म देते हैं ऋषि वेद व्यास। मगर महाराज कहते हैं इनके उपदेश भी छः हैं।

गुरु गुरु एको वेस अनेक॥ (अंग १२)

इन छः गुरुओं का गुरु एक परमात्मा है। गुरु नानक देव जी महाराज कहते हैं ज्ञान जहाँ से भी आता है, सब परमात्मा का है। यह ज्ञान की धाराएँ क्यों बन जाती हैं अलग-अलग। दरअसल बारिश हो रही है। किसी के पास कटोरी है, किसी के पास गिलास है, किसी के पास लोटा है, किसी के पास थाली है, किसी के पास बड़ा थाल और किसी के पास डोल है क्योंकि बर्तन अलग-अलग हैं। बर्तनों की बनावट अलग-अलग है तो पानी भी पड़ रहा है। बर्तनों की बनावट की वजह से पानी का रूप उसके भीतर वही हो जाता है। मगर बर्तनों में जो पानी है, वह एक ही है। चाहे छः गुरु हैं और इनके द्वारा जो ज्ञान प्रगट हुआ है। इन छः गुरुओं का गुरु वह एक है। यहाँ दावे से गुरु नानक जी कहते हैं कि सारा ज्ञान परमात्मा से आता है। आज तक किसी भी एक ब्रह्मज्ञानी ने नहीं कहा कि मैंने ज्ञान स्वयं प्राप्त किया है, सभी कहते हैं परमात्मा से मिला है।

आदि अंति एकै अवतारा॥ सोई गुरु समझियहु हमारा॥

(चौपई याहिब)

अब गुरु नानक देव जी महाराज इसी वाक्य में मांग करते हैं।

जै घरि कीरति आखीऐ॥ (कीर्तन सोहिला)

जिस घर में कीर्तन चल रहा है, जिस घर में सत्संग चल रहा है, हे कर्ता! तुम्हारी बात चल रही है, तुम्हारी बातें चल रही हैं।

सो घरु राखु वडाई तोइ॥

उस घर में मुझे रख, मनुष्य की अनेकों जरूरतें हैं और जरूरतों से मनुष्य संबंध तोड़ नहीं सकता। लाख यत्न करे, मुझे नहीं चाहिए पानी पर शरीर मांगेगा, जरूरत है। लाख ऊँची आवाज में कहूँ मुझे नहीं चाहिए भोजन पर शरीर को भूख लगेगी, मांगेगा। शरीर को गर्मी लगती है, सर्दी लगती है। कुछ बड़ी–बड़ी शरीर की जरूरतें हैं, कुछ छोटी–छोटी जरूरतें हैं। इसलिए मैं अर्ज़ करता हूँ कि जरूरतों का कोई त्यागी नहीं है।

महात्मा बुद्ध, स्वामी महावीर और इस तरह के अन्य त्यागियों का धर्म व्यक्तिगत धर्म है। यह परमात्मा से जुड़ने का साधन है। यह सामूहिक नहीं, सभी का नहीं। कारण? अगर सभी भिक्षु बन जाएँ, फिर कौन देगा, सभी तो भिखारी हैं। इसलिए यह सभी का धर्म नहीं है। अगर सभी ही गृहस्थ के त्यागी बन जाएँ तो 300 वर्ष के पश्चात जमीन पर एक भी व्यक्ति नहीं मिलेगा। महात्मा बुद्ध का धर्म अज़ीम है, महान् है, बड़े विचारक हैं, मगर उनका धर्म व्यक्तिगत है। शेरों से धरती खाली नहीं होगी क्योंकि शेर तो त्याग नहीं करेंगे। वह प्रकृति के नियम से जीएँगे। गायों से धरती खाली नहीं होगी, कुत्तों से खाली नहीं होगी, सांपों से खाली नहीं होगी, पक्षियों से खाली नहीं होगी, पर यह धरती मनुष्य से खाली होगी। क्योंकि गृहस्थ का त्याग करते हैं, गृहस्थ का त्याग व्यक्तिगत धर्म है। भिक्षा मांग कर उपजीविका चलाना, व्यक्तिगत धर्म है। बहुत सारा समय परिश्रम में व्यर्थ होता है, भजन करें।

थाईलैंड में प्रातःकाल 5 बजे भिक्षु निकलते हैं भिक्षा मांगने। सूर्य निकलता है उससे पहले–पहले अपने आश्रमों में आ जाते हैं। लोग अपने घरों के बाहर खड़े होते हैं भिक्षा देने के लिए। श्री गुरु नानक ने जो तरीका हमें दिया है–

घालि खाइ किछु हथहु देइ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ॥

(अंग १२४५)

उदमु करेदिआ जीउ तूं कमावदिआ सुख भुंचु॥
धिआइदिआ तूं प्रभू मिलु नानक उतरी चिंत॥

(अंग ५२२)

सूफी फकीर भिक्षा मांग कर गुजारा करते हैं। जैसे परिश्रम करने वाले कई तरह के हैं और कृत्य में, परिश्रम में खोट को मिला लेते हैं। करना जरा सा है, मांगना बहुत ज्यादा है। 10 प्रतिशत दुकान में वस्तु में लाभ नहीं रखना, 20 प्रतिशत भी नहीं, शत-प्रतिशत। जैसे कार्य धर्म का भी हो सकता है और कार्य को बेईमानी पर भी खड़ा किया जा सकता है। इस तरह भिक्षु, भिखारियों की दुनिया में अलग-अलग भिखारी हैं। एक तो वह जिन्होंने अपनी जिन्दगी को परमात्मा को समर्पित किया है, शरीर की जरूरतों के लिए मांगते हैं। एक वह जो गली-गली में मांगते हैं, बाजार में, चौक में। इन्होंने अपनी जिन्दगी को परमात्मा के दांव पर नहीं लगाया, बस जिन्दगी को मांगने पर लगाया है। मांगना ही जीवन का लक्ष्य है, और कुछ नहीं। भिक्षु जीवन का लक्ष्य परमात्मा है मगर साधन है भिक्षा मांगना। भिखारी, भिखारी यह नीच श्रेणी के हैं। लुटेरा वर्ग, चोर वर्ग है ही नीच वर्ग के। गुरु नानक ने हमें परिश्रमी बनाया है, परिश्रम कर। फिर ऐसा भी कहते हैं-

मंगण गिआ सो मर गिआ मंगण मूल न जाई।।
मांगत मांग ना पाइआ।।

न मांग, भिखारी न बन। इस तरह के अनुयायियों को मैं नहीं जन्म देता, परिश्रम कर।

हैरानी की बात है, पूरी जिन्दगी गुरु नानक ने भ्रमण में बिताई, उपदेश और संदेश में गुजारी, वृद्ध अवस्था में करतारपुर में आखिरी समय में हल चलाते हैं, खेती करते हैं। ज़गत् को बता दिया कि मैंने कार्य नहीं छोड़ा। आखिरी सांस तक कबीर कपड़ा बुनते रहे। जब शिष्यों ने कह दिया कबीर को कि अब तो छोड़ो। आपकी प्रसिद्धि बहुत हो गई है। चारों ओर लोग आपको भक्त-भक्त कह कर पूजते हैं, सम्मान करते हैं, अब तो छोड़ो। कहने लगे नहीं, अब तो मेरा कार्य भी कीर्त्ति बन गया है। अब जब मैं खड्डी चलाता हूँ और खड्डी की धुन पैदा होती है तो मेरे मन में से प्रभु की धुन पैदा होती है। अब तो कपड़े बुनना मनुष्यता की सेवा बन गया है। अब क्यों छोड़ूं? पहले तो सिर्फ मैं जरूरतों की पूर्ति के लिए कपड़े बुनता था। मगर अब तो कपड़े बुनना सेवा बन गया है।

मनुष्य जरूरतों में नहीं जीता, लोभ में जीता है, लोभ मनुष्य के मानसिक

स्तर को इतना गिरा देता है कि प्रभु से जुड़ना, प्रभु चिन्तन करना, सत्संग में बैठना मुश्किल हो जाता है। यह लोभ नहीं करने देता, महाराज कहते हैं लोभ पागल कुत्ता बना देता है मनुष्य को।

जिउ कूकरु हरकाइआ धावै दह दिस जाइ॥
लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ॥

(अंग ५०)

पागल कुत्ता तो किसी को नहीं छोड़ता। जिसने पाला है उसको भी काटेगा। इसलिए तमाम संतजनों ने, अवतारों ने लोभ का त्याग करने के लिए कहा है। जरूरतों की सीमा है, लोभ की कोई सीमा नहीं। जैसे भूख की सीमा तो है, दो रोटियाँ मैं नहीं खाऊँगा तो चार खा लूँगा। चलो चार नहीं तो आठ खा लूँगा। सीमा तो है पर स्वाद की सीमा नहीं है। अब व्यक्ति सारा दिन खाता रहेगा। जरूरतें मनुष्य को नहीं गिरातीं, लोभ गिरा देता है। जरूरतें मनुष्य को नहीं भटकातीं, लोभ भटका देता है। इस लोभ की पूर्ति भी मनुष्य तीन तरीकों से करता है-- परिश्रम करके, मांग कर या छीन कर। मगर लोभ की पूर्ति होती नहीं। कार्य से जरूरतों की पूर्ति होगी, मांग कर भी नहीं होगी, छीन कर भी नहीं होगी। इसमें मनुष्य तृप्त नहीं हो सकता। जिस नुक्ते को गुरु अर्जुन देव जी महाराज ने यहाँ लिया है, वह यह है कि तू मनुष्य है और भी मनुष्य हैं और मनुष्य हो कर मनुष्य से मांगता है। यह तो बहुत हीन बात है। पूरी मनुष्यता कार्य है, कर्ता से मांग। कार्य से क्यों मांगता है? तू भी कर्ता का कार्य है और भी कर्ता के कार्य हैं।

उस कर्ता ने अलग-अलग बर्तन बनाए हैं, मगर बनाए उस एक कर्ता ने ही हैं। किसी को कुछ बनाया है, किसी को कुछ बनाया है, सारे कार्य हैं। कविता कवि का कार्य है। कई छंद हैं और एक छंद अपने को महान बनाना चाहे और दूसरे छंद से विनती करे, हे छंद! तू मुझे ठीक कर दे। छंद छंद को किस तरह ठीक कर सकता है। शेंर शेंर को कैसे ठीक कर सकता है। कवि ठीक कर सकता है। कार्य किसी को महान् नहीं बना सकता। कर्ता ही महान बनाता है। आप आखिरी अर्थ श्रवण करो।

सोरठि महला ५ घरु १ तितुके १ ओं सतिगुर प्रसादि॥

राग सोरठि है और एक ताल में है। यह मात्राएँ होती हैं, ताल होते हैं। किस

ताल में गायन करना है? ओंकार ब्रह्मण्ड की धुनी है। वह सत्य स्वरूप है। उस से सारा ज्ञान आता है और उसका स्वभाव है करुणा, दया, प्रसादि।

किसु हउ जाची किसु आराधी जा सभु को कीता होसी॥

हे प्रभु! मैं किस से माँगू? किस के आगे हाथ फैलाऊँ? सारी तो तेरी रचना है। रचना से मैं क्यों माँगू। कलगीधर पातशाह कहते हैं कि केवल काल ही करतार है–

बिन करतार ना किरतम मानो॥

कार्य को कार्य जानो, कर्ता नहीं, करतार को कर्ता जानो, ज्यादा कार्य के पुजारी हैं और बदकिस्मती से अपने हाथों से कब्र बनाई और फिर चादरें चढ़ाते हैं और माथा टेकते हैं। अपना कार्य परमात्मा का कार्य भी नहीं, अपने कार्य को पूजते जाते हैं। महाराज यहाँ कहते हैं सब कुछ तेरा बनाया है तो फिर मैं कार्य से क्यों माँगू? किसकी मैं उपमा करूँ। अगर सब कुछ किया हुआ तेरा है, तुम्हारा कार्य है।

जो जो दीसै वडा वडेरा सो सो खाकू रलसी॥

चाहे बहुत बड़ा दिखाई दे रहा है, धन बहुत ज्यादा है, गुण बहुत ज्यादा है, कला बहुत ज्यादा है, सब रचना है, सारी कला तुझ से आती है।

तूं सरब कला का गिआता॥

सारा रंग रूप तुम से आता है, सारे पदार्थ तुझ से आते हैं। यह जो बड़े-बड़े दिखाई दे रहे हैं, मैं इनसे भी नहीं मांगता। इन्होंने भी एक दिन खाक हो जाना है, मैंने भी खाक हो जाना है।

निरभउ निरंकारु भव खंडनु सभि सुख नव निधि देसी॥ १॥

वह जो आकार से रहित है, जिसमें भय नहीं है। वही सारी सिद्धियों का दाता है, वही सभी खजानों का दाता है। इसलिए सुखमनी साहिब में ऐलान करते हुए गुरु अर्जुन देव जी ने कह दिया–

मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु॥ (अंग २८१)

जिन्दगी को व्यर्थ करना है तो टेक मनुष्य को बना ले। टेक गुरु तो बनती नहीं, प्रभु तो बनती नहीं। उसके आगे लोग प्रार्थना करते नहीं। कोई किसी डेरे में धक्के खा रहे हैं, परमात्मा के आगे अरदास करनी आती नहीं। कारण, भरोसा ही कोई नहीं।

हरि जीउ तेरी दाती राजा॥

हे हरि! तू दे तो मैं संतुष्ट हो सकता हूँ, मनुष्य के दिए मैं संतुष्ट नहीं। कारण, मनुष्य के देने की सीमा होती है, एक दिन हाथ पीछे कर लेगा। पुत्र अब मैं नहीं दे सकता, मगर परमात्मा के देने की सीमा नहीं है।

देदा दे लैदे थकि पाहि॥ (अंग २)

वह देते-देते नहीं थकता, मगर संसार लेते-लेते थक जाता है, जो देते थकता नहीं, उससे नहीं मांगते और जो संकोच करते हैं, उनके आगे हाथ फैलाते हैं, संतुष्ट हो सकता हूँ मैं अगर तू मेरी झोली में डाले।

माणसु बपुड़ा किआ सालाही
किआ तिस का मुहताजा॥ रहाउ॥

क्यों मैं मनुष्य की प्रशंसा करूँ, क्यों मैं उसको दाता कहूँ? मनुष्य के दिए न तो आज तक कोई संतुष्ट हुआ है और न हो सकता है। इसलिए साहिब कहते हैं- हे प्रभु! तू ही सभी को संतुष्ट करता है-

जिनि हरि धिआइआ सभु किछु तिस का तिस की भूख गवाई॥

जो उस परमात्मा के नाम से जुड़ता है, परमात्मा उसकी सभी भूखें मिटा देता है। ध्यान जोड़ने से।

साचु नामु अधारु मेरा जिनि भुखा सभि गवाईआ॥

(अंग ९१७)

जिन्दगी जरूरतों पर सीमित हो जाती है। जरूरतें पूरी हो गईं, भूख मिट गई। मगर यकीन मानो, लोभी मरते दम तक भूखा रहता है, यह जीता भिखारी की तरह, मरता भी भिखारी की तरह है। ध्यान लगाते लोभ शांत हो जाता है। जिन्दगी जरूरतों पर सीमित हो जाती हैं, ऐसा मनुष्य आनंद मानता है, सुख

मानता है।

ऐसा धनु दीआ सुखदातै निखुटि न कब ही जाई॥

ऐसा नाम का धन उसने झोली में डाला है जितना बांटे खत्म होता ही नहीं।

दिनु दिनु चड़ै सवाइआ नानक होत न घाटि॥ (अंग ३००)

पास धन है और चार पुत्रों में बांटना है, कम हो जाएगा। पूरी दुनिया में नाम जपता रह और जपाता रह, जपते जपते बढ़ेगा, कम नहीं होगा। यह एक ऐसी दौलत है जो हमेशा बढ़ती है। मनुष्य से सारी जिन्दगी मांगते रहोगे, मगर नन्द लाल कहते हैं, जो रब से मांगते हैं, बादशाह हो जाते हैं।

जिस नो बखसे सिफति सालाह॥
नानक पातिसाही पातिसाहु॥

(अंग ५)

तू विद्वान बनना चाहता है, संतुष्ट होना चाहता है, महान होना चाहता है, बंदगी कर, तृप्त हो जाएगा नहीं तो सारी जिन्दगी मांगता ही रहेगा। कहते हैं भाई साहिब भाई नन्द लाल के शरीक जब आनंदपुर साहिब पहुँचे तो दुख बड़ा हुआ उनको। मुल्तान से आए थे। शायद आपको मालूम हो नन्द लाल बहादुर शाह के यहाँ अतालीक थे। औरंगजेब के जो पौत्र थे उनको पढ़ाते थे। फारसी उर्दु में पढ़ाने वाले को अतालीक कहते हैं। एक दिन कहीं कुरान की आयतों के अर्थ इस ढंग से किए, अभी शासन औरंगजेब का चल रहा था और बहादुरशाह को अभी सत्ता नहीं मिली थी। जब कानों में वह अर्थ पढ़ गए तो औरंगजेब ने मुराद को कह दिया कि ऐसा रौशन दिमाग व्यक्ति हिन्दू नहीं चाहिए। आधी रात के समय मुराद आया है नन्द लाल के पास। सोए हुए भाई साहिब को जगाया, कहा मेरा घोड़ा ले जाओ और भाग जाओ। क्यों? आपका रौशन दिमाग खतरे में है। नन्द लाल कहते हैं, मित्र कहाँ भाग जाऊँ? पूरे भारत में शासन तो इसका ही है। मुराद ने कहा, एक जगह ऐसी है जहाँ औरंगजेब का हुक्म नहीं चलता, श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी का हुक्म चलता है। वह कौन-सी जगह? वह आनंदपुर साहिब है।

रात को सफर करते थे, दिन में कहीं छिप जाते थे। मंजिल पर पहुँच गए। सतगुरु के दरबार में हाजिरी भरी और कहने लगे, महाराज! मैंने आप जी के

पास रहना है। यहाँ रहना है? हाँ, यहीं रहना है। तीन चार दिन के पश्चात भाई साहिब सतगुरु को कहने लगे कि जब मैंने यहाँ रहना है और आपने रख लिया है तो कोई सेवा बख्श दो मुझे। सतगुरु कहते हैं, क्या कर सकते हो तुम। महाराज मैं रौशन दिमाग हूँ, मैं रौशन जमीर हूँ, मेरी कलम से नगमे निकलते हैं। सतगुरु कहने लगे तू रौशन जमीर है? हाँ, रौशन जमीर हूँ। दिमाग का धनी है? धनी हूँ। यहाँ रहना भी है? हाँ महाराज रहना भी है। सेवा भी करनी है? हाँ, सेवा भी करनी है। अच्छा तू लंगर के बर्तन साफ किया कर।

कहते हैं, नन्द लाल का दिल बहुत टूटा। कहता मैं इतना रौशन दिमाग हूँ, कोई लिखने पढ़ने का काम देते, लंगर के बर्तन साफ करूँ, कभी साफ नहीं किए थे। रोजाना लंगर के बर्तन साफ करते, अहंकार मिटता गया। सही मायने में बर्तन साफ करना मन साफ करना है। श्रद्धा से करे तो ऐसा हो जाता है। शरीकों को पता चल गया। ससुर परिवार दुखी होकर मुलतान से आनंदपुर साहिब पहुँचा। शरीक जब पहुँचे तो नन्द लाल को समझाते हैं। रब्ब की रज़ा, जब शरीक पहुँचे थे तब भी नन्द लाल बर्तन साफ कर रहे थे। शरीकों ने कहा, अभी आप हमारे साथ चलो, गुरु गोबिन्द सिंघ ने आपकी कद्र नहीं की। नन्द लाल अपने शरीकों को कहने लगे- नसीहत करने वालो! नसीहत न करो। यह मस्तानों की महफिल है। नन्द लाल वहाँ पहुँच गया है जहाँ आपकी नसीहत नहीं पहुँच सकती। एक तरफ सारी गुफ्तगु खड़े हो कर श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी ने सुन ली। पहुँच गए और शरीकों के सामने नन्द लाल को कहते हैं कि हम तुझे कोई अच्छी सेवा नहीं दे सके। नन्द लाल कहते हैं-हे मेरे गुरु! कोई भूल से भी आपकी गली से गुजर जाए, वह दो जहानों की बादशाहत ठुकरा देता है और जो गुजर जाए वह इतना मालामाल हो जाता है, मैं तो दरवाजे पर बैठा हूँ। जो हर समय कदमों में रह रहा है, उसके पास कौन सी चीज की कमी है। तेरी गली का जो भिखारी है वह भी बादशाह बन जाता है।

अनदु भइआ सुख सहजि समाणे सतिगुरि मेलि मिलाई॥ २॥

हे प्रभु! तेरी दात महान बना देती है और आनंद की प्राप्ति हो जाती है। लोभ अन्दर का शांत हो जाता है।

मन नामु जपि नामु आराधि अनदिनु नामु वखाणी॥

हे मन! तू नित्य नाम जप, दिन रात नाम ही जप। न मांग मनुष्य से।

उपदेसु सुणि साध संतन का सभ चूकी काणि जमाणी॥

संतजनों का उपदेश सुन, पीर-पैगम्बरों की वाणी सुन ताकि लोगों की मोहताजी तेरी मिट जाए।

जिन कउ क्रिपालु होआ प्रभु मेरा से लागे गुर की बाणी॥ ३॥

जिन के ऊपर रहमत हो जाती है, पूर्व के संयोग होते हैं, वह प्रभु फिर तेरी वाणी से ही जुड़ जाते हैं और तेरे से ही मांगते हैं।

कीमति कउणु करै प्रभ तेरी तू सरब जीआ दइआला॥

हे प्रभु! जो तेरी दात है, उसकी क्या कीमत? वह सीमा में नहीं है, तेरा दिया हुआ सीमा में नहीं है। अगर कोई अनुभवी कवि है तो वह भी कह देता है कविता का अंत नहीं है, असीम है। हे परिपूर्ण परमात्मा! पदार्थों का भी कोई अंत नहीं, असीम है।

सभु किछु कीता तेरा वरतै किआ हम बाल गुपाला॥

हे परिपूर्ण परमात्मा! सब कुछ तेरी रचना है, हम तेरे बच्चे हैं, तू हमारा पालनहार है।

राखि लेहु नानकु जनु तुमरा जिउ पिता पूत किरपाला॥ ४॥ ४॥

चाहे लाख गलतियाँ करता है बच्चा, पिता फिर भी कठोर नहीं होता। दया के घर में आ कर बच्चे को गले से लगाता है, सभी नियामतें देता है। हे प्रभु! तुम्हारे बच्चे हैं, सदैव गले से लगाए रख। ऐसे हमारा पालन-पोषण कर जैसे शारीरिक पिता अपने बच्चों की देख-रेख करता है। हर समय अपने चरणों से जोड़े रख। साहिब रहमत करें। भूल चूक की क्षमा।

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

बाबा आइआ है उठि चलणा

वडहंसु महला १॥

बाबा आइआ है उठि चलणा इहु जगु झूठु पसारोवा॥
सचा घरु सचड़ै सेवीऐ सचु खरा सचिआरोवा॥
कूड़ि लबि जां थाइ न पासी अगै लहै न ठाओ॥
अंतरि आउ न बैसहु कहीऐ जिउ सुंञै घरि काओ॥
जंमणु मरणु वडा वेछोड़ा बिनसै जगु सबाए॥
लबि धंधै माइआ जगतु भुलाइआ कालु खड़ा रुआए॥१॥
बाबा आवहु भाईहो गलि मिलह मिलि मिलि देह आसीसा हे॥
बाबा सचड़ा मेलु न चुकई प्रीतम कीआ देह असीसा हे॥
आसीसा देवहो भगति करेवहो मिलिआ का किआ मेलो॥
इकि भूले नावहु थेहहु थावहु गुर सबदी सचु खेलो॥
जम मारगि नही जाणा सबदि समाणा जुगि जुगि साचै वेसे॥
साजन सैण मिलहु संजोगी गुर मिलि खोले फासे॥२॥
बाबा नांगड़ा आइआ जग महि दुखु सुखु लेखु लिखाइआ॥
लिखिअड़ा साहा ना टलै जेहड़ा पुरबि कमाइआ॥
बहि साचै लिखिआ अंम्रितु बिखिआ जितु लाइआ तितु लागा॥
कामणिआरी कामण पाए बहु रंगी गलि तागा॥
होछी मति भइआ मनु होछा गुड़ सा मखी खाइआ॥
ना मरजादु आइआ कलि भीतरि नांगो बंधि चलाइआ॥३॥
बाबा रोवहु जे किसै रोवणा जानीअड़ा बंधि पठाइआ है॥
लिखिअड़ा लेखु न मेटीऐ दरि हाकारड़ा आइआ है॥
हाकारा आइआ जा तिसु भाइआ रुंने रोवणहारे॥
पुत भाई भातीजे रोवहि प्रीतम अति पिआरे॥
भै रोवै गुण सारि समाले को मरै न मुइआ नाले॥
नानक जुगि जुगि जाण सिजाणा रोवहि सचु समाले॥ ४॥ ५॥

(अंग ५८१-८२)

वाहिगुरु जी का खालसा।। वाहिगुरु जी की फतह।।

सम्मानयोग्य गुरु रूप साधसंगत जी! हमें तीन अवस्थाओं में से गुजरना पड़ता है–जन्म, जीवन, मरण। जन्म हुआ है। प्रभावित दूसरे होते हैं, खुशियाँ दूसरे मनाते हैं। मृत्यु हुई है, प्रभावित दूसरे होते हैं, विलाप दूसरे करते हैं। जीवन में तो मैं खुद रोता रहता हूँ। हँसता रहता हूँ। जीवन में मैं प्रभावित होता हूँ दूसरों से। बस ये तीन घटनाएँ हैं। जन्म हुआ मां प्रभावित है, पिता प्रभावित है, बहन प्रभावित है, बधाईयाँ हैं, लड्डू हैं, दूसरे प्रभावित हैं। मैं दूसरों से प्रभावित होता तो कभी दुखी, कभी सुखी, कभी शोक संताप में होता, कभी प्रसन्नचित्त होता, कभी उल्लास होता, कभी पतन कला में होता।

कबहू जीअड़ा ऊभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले।।

(अंग ८७६)

कभी मैं इतनी बुलंदियों पर होता हूँ, मानो आसमान छू लूंगा। कभी मैं इतनी गिरावट में होता हूँ, पाताल से भी नीचे चला जाता हूँ। जीवन में क्या होता है? दुख, सुख, जन्मा फिर मर गया। कहते हैं जीवन व्यतीत करने के तरीके भी तीन तरह के हैं। दूसरों से प्रभावित होकर जीना, यह पहला ढंग है। कितना दूसरों से? जो मेरे से आगे हैं। धन में आगे हैं, गुणों में आगे होंगे, सौंदर्य में आगे होंगे, शक्ति में आगे होंगे, प्रभुता में आगे होंगे, जिस जिस चीज में मेरे से आगे हैं, मैं उनसे प्रभावित होकर जीता हूँ। उनसे प्रभावित होकर मैं खुद यत्न करता हूँ। जिनसे मैं प्रभावित हूँ मैं उनसे आगे चलता हूँ जिससे कि एक दिन वो मेरे पीछे चलें।

मैं दूसरों से प्रभावित हूँ, इसलिए कि एक दिन मेरे से भी कोई प्रभावित हो। जिन्दगी का ढंग यही है। जीवन व्यतीत होता है दूसरों से प्रभावित होकर। एक यह जीवन है जो सारा संसार जीता है। राजनीतिक से प्रभावित है, एक जनसभा में वह भाषण देने करने आएगा। लाखों की संख्या में दुनिया एकत्र होगी, 99 प्रतिशत जो बोलेगा वह झूठ होगा। समय को बर्बाद करना होगा, फिर भी हजारों और लाखों का जमघट होगा। क्योंकि उससे मैं प्रभावित हूँ, उसके पास शक्ति है। मैं उसके पीछे चल रहा हूँ, खुशी से नहीं, मजबूरी से ताकि किसी दिन ऐसा मौका आए कि जिसके पीछे मैं चल रहा हूँ, एक दिन वह मेरे पीछे चले। इसके पीछे चलना यह मेरी मजबूरी है, यह मेरे पीछे चले, यह मेरी मांग है, चाहत है।

संस्कार में ऐसा है कोई मनुष्य सभी से आगे भी नहीं, कोई मनुष्य सभी से पीछे भी नहीं। कोई सौंदर्य में आगे होगा, जरूरी नहीं और बातों में आगे होगा। कोई धन में आगे होगा, जरूरी नहीं बाकी बातों में आगे होगा। एक उर्दू का शायर ऐसे कहता है-

खुदा ने हुस्न बख्शा नादानों को, ज़र जलीलों को।
अक्लमंदों को रोटी खुश्क और हलवा बख़ीलों को॥

दुनिया का एक महान गुणवान मनुष्य अष्टावक्र बड़ा कुरूप था। कुटिया से बाहर ही नहीं निकलता था। ऋषि उद्धालक का यह दोहता था,उसकी लड़की का लड़का था। घर से बाहर निकलता था तो बच्चे पीछे लग जाते थे, पत्थर मारते थे, गालियाँ निकालते थे, नकलें उतारते थे। पांव टेढ़े, हाथ टेढ़े, कमर टेढ़ी, गर्दन टेढ़ी, आठ बल थे शरीर में। शारीरिक तल पर सबसे पिछड़ा हुआ, आत्मिक तल पर सबसे आगे। कहीं कहीं कोई ऐसा है कि परमात्मा ने दुनिया की सारी खूबियाँ किसी की झोली में डाली हों। परमात्मा ने क्यों नहीं किया? कुछ न कुछ कमी न हो तो ऐसा संघर्ष नहीं पैदा होता। मैंने देखा है बड़े-बड़े धनवानों के बच्चे बिल्कुल गोबर गणेश। जिन्दगी में कोई चुनौती चाहिए। संघर्ष वह करेगा अगर कुछ कमी हो। शरीर को खूबसूरत बनाए ऐसा कोई साधन नहीं था तो अष्टावक्र ने अपने मन को खूबसूरत बनाने की कोशिश की। मैंने मन अपना ऐसा बनाना है कि परमात्मा कबूल कर ले, निंरकार कबूल कर ले। बहुत सुन्दर हो गया पर फिर भी दुनियादार मनुष्य कह सकता है अष्टावक्र शारीरिक सौंदर्य के तल पर पिछड़ा हुआ है।

सारी खूबियाँ किसी के पास नहीं होती। हर समय आप किसी को प्रसन्न नहीं देखोगे, हर समय किसी को रोते हुए नहीं देखोगे। जीवन में मैं दूसरों से प्रभावित होता हूँ। यह एक ढ़ंग है। दूसरे जिनको हम धार्मिक कहते हैं, वह साधना करते हैं। जरा-जरा सी सुरति शब्द से जुड़ती है, जरा-जरा सा रस आता है। रस अब दूसरे से आता नहीं, अपने भीतर पैदा होता है।

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु॥
देही महि इस का बिस्रामु॥

(अंग २९३)

कोई भी दैवी गुण बाहर से तो आता नहीं जो मैं दूसरे से प्रभावित होऊँ,

यह तो भीतर से आता है। ऐसा मनुष्य फिर खुद से प्रभावित्त होता है। जी रहा है अपने से प्रभावित होकर। इकबाल कहता है–

ख़ज़ाना हूँ छुपाया मुझ को मुझसे,
किसी को क्या ख़बर है कौन हूँ मैं किसी की दौतल हूँ।

मैं क्यों दूसरों से प्रभावित होऊँ, मैं स्वयं ख़ज़ाना हूँ। मैं रेत के ढेर को एक तरफ करूँगा, मोती निकालूँगा, हीरे निकालूँगा। ग़ालिब भी कहता है कि मैं दूसरों से क्यों प्रभावित होऊँ? क्या मैं अपना सीना नहीं रखता? मैं अपना सीना चीरूंगा। चीरा था हनुमान ने और राम को प्रगट किया था। जब भी राम प्रगट होता है सीना चीर कर प्रगट होता है, वैसे प्रगट नहीं होता। हृदय के गहरे तल से प्रगट होगा। मैं अपना सीना नहीं रखता। मैं क्यों जाऊँ दूसरी जगह पर। अपना सीना चीरूंगा और रत्न निकालूँगा–ग़ालिब। मैं इस मिट्टी के ढेर से व्यर्थ मिट्टी निकाल कर हीरे निकालूँगा। मेरा जीवन खान है। ऐसा मनुष्य साधना करने वाला है, ऐसा मनुष्य गुरुमुख है। ऐसा मनुष्य सत्संगी है। यह अब किसी से भी प्रभावित नहीं। इसकी तलाश खुद में है। इस तरह के व्यक्ति को कहते हैं निर्लिप्त। तीसरा मिट्टी सारी एक तरफ हो गई है, रत्न ही रत्न प्रगट हो गए हैं, पत्थर सारे एक तरफ हो गए हैं, सोना ही सोना प्रगट हो गया है। पानी सारा छान कर एक तरफ कर दिया है, मोती ही मोती हाथ लगे हैं, अब दूसरे प्रभावित होते हैं। अब मैं निर्लिप्त हो गया हूँ, निर्लिप्त से भाव मैं अकेला हो गया हूँ। जन्म समय मैं अकेला था, मृत्यु समय भी अकेला था। इसको कहते हैं एकांतवासी, दूसरा नहीं चाहिए।

ऋषि उद्धालक की एक दिन मैं कथा पढ़ रहा था। गंगा के तट पर बैठे थे, अकेले बैठे थे। इनके नाम का एक तीर्थ जयपुर में बना हुआ है। पहाड़ से जल निकलता है। कहते हैं इस ऋषि ने यहाँ बहुत बड़ी साधना की है। एक मित्र पास चला गया और कहा संत जी, आप अकेले बैठे थे और अकेला प्रभु भी न हो। मैं आपका साथ देने के लिए आ गया हूँ। उद्धालक कहते हैं, मित्र, तुम्हें किसने कह दिया कि मैं अकेला बैठा हूँ, मैं तो अपने साथ बैठा था। मैं तो खुद से जुड़ा हुआ बैठा था। अब तू आया है, मुझे अकेला कर दिया है। मुझे स्वयं से तोड़ दिया है। जन्मता अकेला है, मरता अकेला है और जीवन में अकेला हो कर कोई परमानंद मान सके तो अब उसने वह अवस्था प्राप्त कर

ली है। किसी से प्रभावित नहीं होगा चाहे जगत् प्रभावित हो। इसको एक सूफी ऐसे बयान करता है–

जो हँस रहा है सो हँसता रहेगा, जो रो रहा है सो रोता रहेगा
सकूने कलब से खुदा खुदा कर, जो कुछ भी होता है सो हो कर रहेगा।।

जो दूसरों से प्रभावित हैं तो कितने समय तक मान करेंगे। धन से प्रभावित हैं, यौवन से प्रभावित हैं। यौवन को ढलते कोई देर लगती है। ऐसा तो कोई दिन नहीं जिसकी रात नहीं है। मैं दूसरों से प्रभावित हूँ तो मैं भयभीत भी हूँ, मैं ख़तरे में भी हूँ। क्योंकि दूसरे सारे बाहर हैं और उनके प्रभाव से मैं जी रहा हूँ।

देखो हमारे देश में एक पद है राष्ट्रपति का। अब एक अरब के करीब जनसंख्या होने लगी है भारत की। एक अरब व्यक्ति लाईन में लगा हुआ हो और एक व्यक्ति कुर्सी पर पहुँच गया है जो सब से ऊँची है और एक अरब बाकी चाहवान हों तो यह कुर्सी ख़तरे में नहीं है। यह आज गिरी, कल गिरी।

जिसु आसणि हम बैठे केते बैसि गइआ।। **(अंग ४८८)**

ऐसी कुर्सी पर मालूम नहीं कितने बैठ गए हैं, और आगे कितने बैठेंगे। धन संपदा हमेशा ख़तरे में है, यौवन ख़तरे में है, जीवन ख़तरे में है। जिस दिन मनुष्य अपने भीतर की सारी भीड़ को एक तरफ करता है, अकेला हो जाता है, उसी दिन प्रभु प्रगट होता है। मनुष्य ही परमात्मा हो जाता है।

अब तउ जाइ चढे सिंघासनि मिले है सारिंगपानी।।
राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी।।
(अंग ९६९)

राम कबीर हो गए हैं, नामदेव नारायण हो गए हैं।

नामे नाराइन नाही भेदु।। **(अंग ११६६)**

गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी।।
नानक लीन भइओ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी।।
(अंग ६३३)

श्री गुरु नानक देव जी महाराज इस शब्द में ऐसे कह रहे हैं कि अगर आना है तो जाना भी है। जन्म हुआ है तो मृत्यु भी होगी। दिन हुआ तो रात भी

होगी। मनुष्य की चाहत जन्म हुआ, मुझे चाहिए। मृत्यु न हो, मुझे नहीं चाहिए। यौवन आया है, मुझे चाहिए। बुढ़ापा न आए, मुझे नहीं चाहिए। इज्जत चाहिए, बेइज्जती की मुझे आवश्यकता नहीं। कौन बताए बूढ़ा कौन होता है, जो जवान हो। मरता कौन है जिसका जन्म हो। जो इज्जत की चाहत नहीं रखता, दुनिया की कोई ताकत उसे बेइज्जत नहीं कर सकती। मैंने दूसरे से इज्जत की चाहत रखी है, दूसरा किसी समय मुझे बे-इज्जत भी करेगा। हर एक की जिन्दगी दूसरों पर खड़ी है। संत अगर कोई दूसरों से प्रभावित है, संत शिष्यों से प्रभावित है। बड़े-बड़े गृहस्थी मिलेंगे आपको संत। गृहस्थी ऐसे ही भर्त्सना के पात्र बन रहे हैं। भक्त कबीर कहते हैं-

कबीर सिख साखा बहुते कीए केसो कीओ न मीतु॥
चाले थे हरि मिलन कउ बीचै अटकिओ चीतु॥

(अंग १३६९)

चला था प्रभु को मिलने के लिए, अपने शिष्यों में ही अटक कर रह गया। गृहस्थी अपने घर-बार में अटक कर रह गया। यह अपने आश्रम में अटक कर रह गया। उसको घर की ईंटों ने रोका है। इसको आश्रम की ईंटों ने रोका है। जो रोक दे वह माया है। घर, आश्रम ने नहीं रोका तो वह मंदिर हो गया। परिवार ने नहीं रोका तो वह मंदिर हो गया। जो जो रोक दे दीवार है, जो जो न रोके द्वार है। कहते हैं जैसे जैसे धन मनुष्य के पास बढ़े, शूम बनता है। मेरे पास हो, दूसरे के पास न हो। कई बार इतना बढ़ता है कि मेरे पास हो, मेरे भाई के पास न हो। कम से कम मुझ से तो मेरा भाई कमजोर होना चाहिए। मेरी बहन के पास भी न हो, मेरे मित्र के पास भी न हो, मेरे पड़ोसी के पास भी न हो, मगर मेरे पास हो। जिस दिन नाम की दौलत मिलती है तो मनुष्य यह चाहता है जो मेरे पास है यह सबके पास हो। तभी तो सारी दुनिया को बताने के लिए चल पड़े गुरु नानक कि आप सारे अपने ख़ज़ाने ढूंढो तो ख़ज़ाना मिल जाएगा। आप मालामाल हो जाओगे।

वडहंसु महला १॥

बाबा आइआ है उठि चलणा इहु जगु झूठु पसारोवा॥

बाबा शब्द अरबी का है। बाबा शब्द धार्मिक है जो परमात्मा की पहचान

रखता है। जो परमात्मा के रास्ते पर चलता है और दूसरों को चलाने की कोशिश करता है, उसको कहते हैं बाबा। हमारे देश में बाबा कुछ और अर्थ ही कर गया है। बूढ़े को बाबा कहते हैं। जरूरी नहीं कि सारे बूढ़े समझदार होते हैं और प्रभु के मार्ग पर चलने-चलाने वाले होते हैं। मगर सम्मान से हम बाबा कहते हैं। देखो गुरु नानक का हृदय, जगत् को संबोधन करना हो तो बाबा कहते हैं। कारण? हर एक का भविष्य है बाबा होना।

कहते हैं एक भिक्षु को माथा टेकते थे महात्मा बुद्ध। भिखारी और भिक्षु में अन्तर है। भिखारी मांगता है, भिक्षु जो मिल जाए। उनको मांगने की आज्ञा नहीं है। द्वार-द्वार पर जाओ जो मिल जाए। इसलिए हमारे देश में भिक्षु सम्मानित हुए हैं। किसी घर से गालियाँ भी मिल गईं, ठीक है, किसी घर से चेतावनी भी मिल गई, ठीक, किसी घर से कुछ नहीं मिला तो भी ठीक। भिखारी को मिल गया तो मन से धन्यवाद करेगा, अगर नहीं मिला तो गालियाँ निकालेगा। महात्मा बुद्ध ने भिक्षु के कदमों पर अपना सिर रखा और भिक्षु रोकर कहता है, भगवान! यह क्या कर रह हो, आपसे तो शिक्षा लेता हूँ, मैं तो आपसे प्रेरणा लेता हूँ। मालूम है महात्मा बुद्ध ने क्या कहा? मैं आज का महात्मा बुद्ध हूँ, तू कल का होने वाला महात्मा बुद्ध है। तू वर्तमान को माथा टेक रहा है, मैं भविष्य को माथा टेक रहा हूँ। सभी का भविष्य यही है।

जब सभी का भविष्य है बाबा होना तो गुरु नानक पूरी ख़लकत को बाबा कह कर संबोधन करते हैं। सतगुरु संबोधन करते हैं बाबा रूप में। अगर आया है, उठ जाना भी होगा। जन्म स्मरण रखें तो भविष्य की चिन्ता, मृत्यु स्मरण रखें तो भविष्य मिट जाता है। मन सिकुड़ जाता है। फिर क्या मांगूं? मांगे पूरी खत्म हो जाती हैं। परमात्मा को याद कर रहे थे कामना वश, मांगों की वजह से, मृत्यु स्मरण में आ गई, पूरी मांगे खत्म हो गईं। इसलिए गुरु नानक ने कहा परमात्मा को याद करना बाद में पर मृत्यु को याद करना पहले। क्यों? परमात्मा के पास भी मैं आ सकता हूँ कामना करके, मैं पाठ भी कर रहा हूँ अपनी कामनाओं को मुख्य रख कर, मैं धार्मिक कर्म भी कर रहा हूँ, अपनी इच्छाओं को मुख्य रखकर, पर मुझे मृत्यु याद आ गई, कामनाएँ तो गिर गईं। मृत्यु ऐसी घटना है कुछ भी रहने नहीं देगी। जब शरीर पर आती है तब शरीर को नहीं रहने देती। जब मन मृत्यु को कबूल कर लेता है, तो मन में कोई कामना नहीं, मृत्यु ऐसी है। मन क्या है? इच्छाओं का समूह, मन के मिटते ही प्रभु प्रगट हो

जाता है।

मनु मरै धातु मरि जाइ॥ बिनु मन मूए कैसे हरि पाइ॥

(अंग ६६५)

मन मर गया, मर गईं सारी ख्वाहिशें। मन मर गया, प्रभु का मिलाप हो गया। तो साहिब कहते हैं कि आया है तो उठ कर भी जाना है। जगत् इस तरह का है। यह झूठा है। झूठ के पश्चात कहीं यह न समझ लेना कि नहीं है।

माता जूठी पिता भी जूठा जूठे ही फल लागे॥ (अंग ११९५)

कबीर कह रहे हैं कि मां भी झूठी, पिता भी झूठा, यह संसार भी झूठा। जो है और नहीं हो जाता, नहीं है। उसको कहते हैं झूठ। जो है, जितनी देर तक मैं पूरा पकड़ने की कोशिश करूँगा, उतनी देर में नहीं है। जितनी देर तक मैं कस कर जवानी को पकड़ने की कोशिश करूँगा, उतनी देर में बुढ़ापा हाथ में आ जाएगा। कस कर दिन को पकड़ने की कोशिश करें रात आ गई। यहाँ हाथ में जब कुछ रहे न, जिस को पकड़ें हाथ से निकल जाए, उसको कहते हैं झूठ। महाराज कहते हैं यह जगत् झूठ का प्रसार है। जो पास है एक दिन नहीं हो जाएगा।

सचा घरु सचड़ै सेवीऐ सचु खरा सचिआरोवा॥

वह जो सच्चा है, परिपूर्ण परमात्मा जो सच है, सत्य है, मिथ्या नहीं है, सेवा उसकी करें। जो जो उसकी सेवा करते हैं, सेवा क्या है? उसका सिमरन जो करते हैं, उसको याद करते हैं, वह फिर सच के दरबार में भले होकर उतरते हैं। भाव वह सच का स्वरूप हो जाते हैं। सच के दरबार में जा कर खड़े हो जाते हैं। वह सच तक पहुँच जाते हैं।

कूड़ि लबि जां थाइ न पासी अगै ल़है न ठाओ॥

पर जो झूठा है, जो झूठ में जी रहा है, इसे जगह ठिकाना नहीं मिलता। सिवाए भटकने के इसके हाथ और कुछ नहीं आएगा। जो सच में लीन हुआ, वह टिक जाएगा क्योंकि सच टिकाऊ है, झूठ टिकाऊ नहीं है। संसार में ऐसा कुछ नहीं जो टिका हुआ है। संसार तो एक बहाव है, आज है कल नहीं। इसलिए साहिब कहते हैं जिन्होंने इस झूठ को पकड़ा है, सच की दरगाह में उनके लिए कोई जगह नहीं।

अंतरि आउ न बैसहु कहीऐ जिउ सुंञै घरि काओ॥

इनको आदर-सत्कार से इस तरह नहीं कहा जाएगा कि आओ बैठो। इस तरह का सम्मान उसको नहीं मिलेगा जिसने झूठ को पकड़ा है और उसकी जिन्दगी इस तरह होगी जैसे सूने घर में कौआ आ गया है। उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। इस तरह ही उस मनुष्य का जगत् में आना होगा और जाना होगा।

जंमणु मरणु वडा वेछोड़ा बिनसै जगु सबाए॥

सबसे बड़ा बिछोड़ा क्या है? जन्म के साथ मृत्यु। अगर जन्म मृत्यु में बदलता है तो जगत् में जो कुछ भी मिलता है, मिलन में बदल जाता है। पूरा जगत् जब नाशवान् है तो तुम्हारे हाथों में क्या रहना है? साहिब कहते हैं, यह जगत् इस तरह का है और झूठा है।

लबि धंधै माइआ जगतु भुलाइआ कालु खड़ा रूआए॥ १॥

लोभ का मारा हुआ जीव का लक्ष्य व्यापार है। व्यापार साधन था, धर्म लक्ष्य था। यह उल्टा चल रहा है और धर्म साधन बनाया है, व्यापार लक्ष्य है। धर्म मंदिर में भी इसलिए जाना है ताकि व्यापार ठीक चले। किसे-किसे व्यापार में से धर्म की सुगन्ध आती है, नहीं तो अक्सर ऐसा होता कि अनेकों के धर्म में से व्यापार की दुर्गंध आती है। व्यापार में ऐसे फँसे हैं कि मौत का भय हर समय सिर पर खड़ा है और यह भय हमेशा इनको रोने के लिए मजबूर करता है। जैसे कोई भूकंप आया है और 50 हजार व्यक्ति मर गए हैं, आँखों में आंसू नहीं आए। क्योंकि 50 हजार व्यक्ति मर गए हैं, कोई संबंध नहीं है। घर के एक व्यक्ति की मौत हो गई है, आँखें डूब गई हैं आंसूओं में। इस तरह के मनुष्य के किसी संबंधी की जब कभी मृत्यु होती है तो रोते हैं और उसमें उन्हें थोड़ी सी अपनी मौत दिखाई देती है। इस तरह जिन्दगी व्यतीत होती है।

बाबा आवहु भाईहो गलि मिलह मिलि मिलि देह आसीसा हे॥

हे बाबा! आ कर बैठें, भाईचारा बनाएँ, मिलाप करें। धर्म मिलाप पर खड़ा है। धार्मिक मनुष्य की क्या पहचान होगी? यह अंदर से सबसे मिला होगा। यह टूटा एक से भी नहीं होगा। इस के सभी मित्र होंगे। लोभी, अहंकारी मनुष्य का शायद परिवार में भी सभी से गहन संबंध न हो। जिन जिन से स्वार्थ की पूर्ति होगी, उनसे जुड़ा होगा, मगर धार्मिक मनुष्य तो पूरे ब्रह्माण्ड से जुड़ा होगा।

साहिब कहते हैं, एक दूसरे को हम समझें, एक दूसरे के लिए दुआ करें, तुम्हें परमात्मा स्मरण रहे। तुम दैवी गुणों को प्राप्त कर सको।

बाबा सचड़ा मेलु न चुकई प्रीतम कीआ देह असीसा है॥

हे बाबा! इस तरह अगर सच का मिलाप हो जाए। फिर बिछोड़ा नहीं होता। जिस दिन सच मिलता है बिछुड़ता नहीं। जो बिछुड़ गया है वह मिथ्या है, जो मिल कर भी नहीं बिछुड़ता वह कभी नहीं बिछुड़ता। उस सच्चे प्रीतम के मिलन का उपदेश और आशीष दो ताकि जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति हो।

आसीसा देवहो भगति करेवहो मिलिआ का किआ मेलो॥

इस तरह की आशीष दो कि तू भक्ति कर सके और इस तरह का जो पुरुष है उसका मिलाप हो जाता है। जो मिला हुआ है, उसके लिए यह उपदेश कि तुम्हारा मिलन हो नहीं वह तो मिला हुआ है। जो एक से मिल गया, वह सभी से मिल गया है और जो एक से नहीं मिला, शायद किसी को भी नहीं मिला। इस तरह की आशीष दो।

इकि भूले नावहु थेहहु थावहु गुर सबदी सचु खेलो।

एक भ्रम में भूले हुए हैं। सच का खेल खेलो और शब्द से जुड़ कर जिन्दगी को सही बनाओ। सच बनाओ।

जम मारगि नही जाणा सबदि समाणा जुगि जुगि साचै वेसे॥

जिस का हर युग में सच्चा भेष है गुरु शब्द के साथ, उसके साथ जुड़ें ताकि सारी भटकनें मिट जाएँ।

साजन सैण मिलहु संजोगी गुर मिलि खोले फासे॥ २॥

गुरु शब्द द्वारा प्रभु के संयोग को हासिल करें और इस तरह के साजन बनें ताकि जितने फंदे हैं संसार के ये मिट जाएँ।

बाबा नांगड़ा आइआ जग महि दुखु सुखु लेखु लिखाइआ॥

बाबा, नग्न ही आया है जगत् में और एक लेख पूर्व का। साऊथ हाल लंदन में अमृत समय दो नवयुवक आए और मेरे आगे एक ऐसा बच्चा रख दिया जिसकी आँखें नहीं थीं जन्म से। पांव भी नहीं बने, हाथ भी नहीं बने,

पूरे नहीं बने और जन्म हो गया। कहने लगे ज्ञानी जी, कर्म फिलॉस्फी के ऊपर हमने आपकी कैस्टस सुनी हैं, किताबें पढ़ी हैं। आपकी कथा कहानियों को गलत करने के लिए आए हैं। इस बच्चे ने क्या किया है? अगर किए हुए का फल है तो फिर इसने क्या किया है? जो कुछ करने योग्य है ही नहीं।

मैंने कहा विचार विमर्श इसको कहते हैं कि तुम कोई बात कहो, मैं सुनाऊं, आप उसका उतर दो। प्रश्न भी खुद कर लिया और उतर भी तुमने खुद दे दिया, क्या इसको विचार विमर्श कहते हैं? यह विचार विमर्श का ढंग नहीं है। खीझ कर कहने लगे चलो ऐसे ही सही। पर उनका कहना भी बता रहा था कह नहीं रहे।

मैंने उनसे कहा जीवन प्रतिदिन कम होता जा रहा है। मेरे किए कर्म प्रतिदिन बढ़ रहे हैं। मैं सुबह से लेकर शाम तक कर्म करता हूँ। बोलना कर्म है, देखना कर्म है, सुनना कर्म है, मैं हाथों से जो करता हूँ वह कर्म है। रात को जब मैं सो जाता हूँ तो मेरा मन कर्म करता है, सपनों की दुनिया रचता है। कर्म तो हर समय चल रहा है। जीवन प्रतिदिन छोटा हो रहा है। कर्म मेरे बढ़ते जा रहे हैं। इसको इस तरह लेना, मरते दम तक भी कर्म तो चलते हैं। जिन्दगी का महल तो गिर गया, कर्मों की फसल तो खड़ी है, कौन खाए? वह जो मैं बीजता रहा, साथ खाता रहा पर कुछ ऐसा था जो बचता रहा। इसको कहते हैं संचित कर्म। धन मैंने कमाया। कुछ मैं खर्च करता रहा, कुछ मैं घर में रखता रहा जरूरत के लिए। उसको कहते हैं धन संचित करना। कर्म मैं कुछ साथ साथ भोगता जा रहा हूँ, कुछ नहीं भी भोगता, उसके कई कारण भी हो सकते हैं। कुछ बीज ऐसे भी है जो बोए तो पाँच-दस दिनों में फलीभूत होते हैं। कुछ महीने दो महीने में। एक दिन जीवन नहीं रहता। मगर कर्म तो बाकी रह गया। परमात्मा कहता है कोई बात नहीं और जन्म दूंगा तुझे। मैंने कहा पूर्व कर्मों के मुताबिक यह जन्म है। बिना कारण तो कुछ भी नहीं होता।

बच्चा उठा लिया मगर उनकी तसल्ली न हुई। कहने लगे अगला जन्म किसने देखा है। मैंने कहा फिर आप ऐसे भी कह सकते हो परमात्मा किसने देखा है। जो मैं नहीं जानता, इसका मतलब वह है नहीं। यह तो कोई तर्क नहीं, लेख मिटते नहीं। भोगने पड़ते हैं। साहिब कहते हैं जिस तरह पूर्व के लेख हैं उसके मुताबिक जीवन चलता है।

लिखिअड़ा साहा ना टलै जेहड़ा पुरबि कमाइआ॥

जो आज से पहले किया है, यह लिखा हुआ लेख नहीं टलता, भोगना पड़ता है।

बहि साचै लिखिआ अंम्रितु बिखिआ जितु लाइआ तितु लागा॥

कर्ता तू है, लिखता परमात्मा है। देखा तो मैंने मन की वजह से प्रभु की विधि-विधान अनुसार। वह देखा हुआ भीतर लिखा गया। उस सच्चे ने अमृत और जहर इस तरह के लेख लिख दिए। क्यों? कहीं मैं अमृत बीजता रहा कहीं मैं जहर बीजता रहा। कभी तू खुश, कभी तू दुखी अपने कर्मों के मुताबिक।

कामणिआरी कामण पाए बहु रंगी गलि तागा॥

कामना की बंधी हुई यह जीव-स्त्री कामिनी ने माया के अलग-अलग रंगों की जंजीरें अपने गले में डाली हैं। यह बहु-रंगों वाले धागे वासना कारण, कामना कारण इसने अपने गले में डाल लिए हैं उनमें ही फँसी हुई है।

होछी मति भइआ मनु होछा गुड़ु सा मखी खाइआ॥

संकीर्ण बुद्धि के कारण अपनी बुद्धि को बड़ा नहीं होने दिया। हर समय परमात्मा को याद करें, बुद्धि महान होती जा रही है। हर समय संसार को याद करें, बुद्धि छोटी होती जा रही है। तुच्छ बुद्धि के कारण यह जगत् में इस तरह फँसा, मगर प्रश्न उठता है क्या फँसा? महाराज कहते हैं-

गुड़ु सा मखी खाइआ॥

आखिर गुड़ मीठा है और जैसे मक्खी बैठती है मिठास के लालच में, गुड़ में ही फंस जाती है, लोभ वश होकर, अहंकार वश होकर, वासना वश होकर इनका अपना रस है। मगर यह ऐसा रस है जैसे मीठे गुड़ के कारण मक्खी बैठी और फँस गई।

ना मरजादु आइआ कलि भीतरि नांगो बंधि चलाइआ॥ ३॥

आखिर यह शरीर के कारण नग्न आया है जगत् में और अब चेतना के कारण नग्न जा रहा है प्रभु के दर पर। बेइज्जती नग्न है। इस तरह का यह अपनीं झोली में फल डाल कर जा रहा है।

बाबा रोवहु जे किसै रोवणा जानीअड़ा बंधि पठाइआ है॥

प्राणप्रिय जो प्राणों से अधिक प्रिय है। जब उसको बांध कर ले चले तो भाई रोते हैं। संबंधी रोते हैं क्योंकि प्राण से भी प्रिय है।

लिखिअड़ा लेखु न मेटीऐ दरि हाकारड़ा आइआ है॥

इस में क्या किया जा सकता है? परमात्मा का हुक्म, परमात्मा का विधान और उसके मुताबिक उठ कर जा रहा है। उसका यह हुक्म है।

हाकारा आइआ जा तिसु भाइआ रूंने रोवणहारे॥

हुक्म आया उस परिपूर्ण परमात्मा का तो संबंधी थे रोने वाले, रोने लग पड़े दुखी होकर।

पुत भाई भातीजे रोवहि प्रीतम अति पिआरे॥

अति प्रिय संबंधी रो रहे हैं। पुत्र, भतीजे, भाई रो रहे हैं।

भै रोवै गुण सारि समाले की मरै न मुइआ नाले॥

भय कारण रो रहे हैं कि इसके वियोग के कारण हमें कोई नुक्सान न हो। फिर उसके गुणों को याद कर रोते हैं हमेशा मृत्यु के पश्चात गुण याद आते हैं, जीते तो अवगुण दिखाई देते हैं। भयभीत होते हैं आज रहा नहीं तो इन गुणों की सांझ नहीं रही, मगर कोई मरने वाले के साथ मरता नहीं, जीने के लिए सभी सहमत हो जाते हैं।

नानक जुगि जुगि जाण सिजाणा रोवहि सचु समाले॥ ४॥ ५॥

साहिब कहते हैं रोना है मगर किसी दिन तेरी आँखों से आँसू निकलें परमात्मा के लिए की तू उससे बिछुड़ा हुआ है। उसके बिछोड़े कारण रो। जिस दिन दो आँसू निकलेंगे मिलन नसीब हो जाएगा और ऐसा मिलन जो बिछोड़े में कभी नहीं बदलेगा। ऐसा परमानंद तुम्हारी झोली में पड़ जाएगा। साहिब रहमत करें भूल चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

विणु भगती घरि वासु न होवी

धनासरी छंत महला १॥

पिर संगि मूठड़ीए खबरि न पाईआ जीउ॥
मसतकि लिखिअड़ा लेखु पुरबि कमाइआ जीउ॥
लेखु न मिटई पुरबि कमाइआ किआ जाणा किआ होसी॥
गुणी अचारि नही रंगि राती अवगुण बहि बहि रोसी॥
धनु जोबनु आक की छाइआ बिरधि भए दिन पुंनिआ॥
नानक नाम बिना दोहागणि छूटी झूठि विछुंनिआ॥१॥
बूडी घरु घालिओ गुर कै भाइ चलो॥
साचा नामु धिआइ पावहि सुखि महलो॥
हरि नामु धिआए ता सुखु पाए पेईअड़ै दिन चारे॥
निज घरि जाइ बहै सचु पाए अनदिनु नालि पिआरे॥
विणु भगती घरि वासु न होवी सुणिअहु लोक सबाए॥
नानक सरसी ता पिरु पाए राती साचै नाए॥२॥
पिरु धन भावै ता पिर भावै नारी जीउ॥
रंगि प्रीतम राती गुर कै सबदि वीचारी जीउ॥
गुर सबदि वीचारी नाह पिआरी निवि निवि भगति करेई॥
माइआ मोहु जलाए प्रीतमु रस महि रंगु करेई॥
प्रभ साचे सेती रंगि रंगेती लाल भई मनु मारी॥
नानक साचि वसी सोहागणि पिर सिउ प्रीति पिआरी॥३॥
पिर घरि सोहै नारि जे पिर भावए जीउ॥
झूठे वैण चवे कामि न आवए जीउ॥
झूठु अलावै कामि न आवै ना पिरु देखै नैणी॥
अवगुणिआरी कंति विसारी छूटी विधण रैणी॥

गुर सबदु न मानै फाही फाथी सा धन महलु न पाए॥
नानक आपे आपु पछाणै गुरमुखि सहजि समाए॥४॥
धन सोहागणि नारि जिनि पिरु जाणिआ जीउ॥
नाम बिना कूड़िआरि कूड़ु कमाणिआ जीउ॥
हरि भगति सुहावी साचे भावी भाइ भगति प्रभ राती॥
पिरु रलीआला जोबनि बाला तिसु रावे रंगि राती॥
गुर सबदि विगासी सहु रावासी फलु पाइआ गुणकारी॥
नानक साचु मिलै वडिआई पिर घरि सोहै नारी॥ ५॥ ३॥

(अंग ६८१)

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

सम्मानयोग्य गुरु रूप साधसंगत जी। जमीन पर कभी अंधेरा है, कभी रोशनी है, कभी दिन है, कभी रात है। बहुत सी मनुष्यता इस ढंग से जीती है। कभी ज्ञान में, कभी अज्ञानता में। बड़े से बड़ा विद्वान भी हर समय विद्वान नहीं होता, किसी समय मूर्ख होता है। बड़े से बड़ा मूर्ख भी हर समय मूर्ख नहीं होता, किसी समय अच्छी बात करता है। बच्चा भी कभी महान् बात कह देता है, बूढ़ा भी कभी तुच्छ बात कह देता है। चाहिए हमें रोशनी, जब अंधेरा होता है। फिर बत्ती जलाते हैं। कुछ रोशनी प्राकृतिक है, सूर्य से है। जब अंधेरा होता है, फिर हम अपने यत्नों से, उद्यम से रोशनी पैदा करते हैं, चाहे वह रोशनी भी सूर्य की होती है। मगर यत्न हमें करना पड़ता है। कबीर कहते हैं, कुछ ऐसे हैं जो कभी अंधेरे में जीते हैं, कभी रोशनी में जीते हैं, कुछ ऐसे हैं जो सदा ही रोशनी में जीते हैं। मगर बहुसंख्या में ऐसे हैं जो सदा ही अंधेरे में जीते हैं। जन्म अंधेरे में, जीवन अंधेरे में, मृत्यु अंधेरे में। अमावस्या इतनी लंबी है कि जन्म से लेकर मृत्यु तक चलती रही। पता नहीं आगे भी चलेगी, बड़ी लंबी अमावस्या।

मैं अर्ज़ करूँ, सभी का जन्म अंधेरे में होता है और मृत्यु भी अंधेरे में होती है।

मन रे संसारु अंध गहेरा॥ **(अंग ६५४)**

आप कहोगे क्या मृत्यु भी किसी की रोशनी में हुई है। हाँ होती है।

मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु॥ (अंग १३६५)

किसकी मृत्यु रोशनी में है? जिसका जीवन रोशनी में है। जन्म से ही जिसके जीवन में रोशनी है, हम उन्हें अवतार कह देते हैं। जैसे भट्ट कहते हैं-

तै जनमत गुरमति ब्रहमु पछाणिओ॥ (अंग १४०७)

हे गुरु अर्जुन देव जी! आप तो जन्म से ब्रह्मज्ञानी हो। आप तो जन्म से ही रोशनी में हो। यह कभी-कभी होता है, जिसको इकबाल ने ऐसे कहा-

हजारों साल नरगिस अपनी बेनूरी पे होती है।
बड़ी मुश्किल से होता है चमन में दीदावर पैदा॥

कभी-कभी कोई ऐसा फूल खिलता है मानव गुलिस्तान में, सारी नज़रें वहीं टिकती हैं। मैं अर्ज़ करूँ, रोशनी तो कुछ साधनों से करनी पड़ेगी भीतर, बाहर बिना साधनों के भी होता है। सूर्य की रोशनी है, मुझे क्या साधन जुटाने पड़े। सूर्य की रोशनी फैल सके, मुझे कुछ भी नहीं करना पड़ा। मगर मेरे मन के तल पर रोशनी हो, इस तरह तो नहीं होगी, कुछ करना पड़ेगा। पूरी जिन्दगी तेरी अंधेरे में गुजर गई। अब किसी तरह अनुमान लगाओगे कि यह रोशनी में जी रहा है कि अंधेरे में? संसार दिखाई दे रहा है, पूरे का पूरा अंधेरे में जी रहा है। निरंकार दिखाई दे रहा है। यह पूरी की पूरी रोशनी में जी रहा है।

सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंदु बिनु नहीं कोई॥
(अंग ४८५)

पदार्थ दिखाई दे रहा है, अंधेरे में जी रहा है। सिर्फ परिवार दिखाई दे रहा है, अंधेरे में जी रहा है। निरंकार दिखाई दे रहा है, परिवार में भी रोशनी में जी रहा है। अंधेरे में ठोकरें भी होंगी, टकराव भी होगा। कहीं भाई-भाई से टकराएगा, कहीं पिता पुत्र से टकराएगा, कहीं पुत्र पिता से टकराएगा, कहीं पति पत्नी से टकराएगा। ऐसा टकराव आप घर-घर में देख सकते हो।

ऊचे चड़ि कै देखिआ तां घरि घरि एहा अगि॥
(अंग १३८२)

दो अन्धे टकराएँगे। या ऐसा हो सकता है एक अंधा है, एक नेत्रवान है। फिर भी टकराव हो सकता है। एक नेत्रवान है और अधिकतर अंधे हैं, फिर

भी टकराव हो सकता है। क्योंकि इतने अंधों में जो नेत्रवान जी रहा है, कितने समय तक स्वयं को बचाएगा, किसी न किसी से टक्कर होगी। मनुष्य को दीवाली चाहिए, क्योंकि मनुष्य अमावस्या में है। मनुष्य को रोशनी चाहिए क्योंकि अंधेरे में है, पहले मनुष्य को यह तस्लीम करना पड़ेगा कि मैं अंधेरे में हूँ, अज्ञानी हूँ। शायद इसलिए हमें बड़ा कीमती नाम दिया है गुरु नानक देव ने 'सिक्ख'। तूने सीखना है, तू कबूल कर मैंने सीखना है, कुछ नहीं जानता मैं। मैं अंधेरे में हूँ। पर, अगर अंधेरा कबूल ही नहीं तो, आप कहोगे अंधेरे में जी रहा हूँ तो अंधेरा कबूल क्यों नहीं?

ज्ञानी भगवान सिंघ कीर्तनीए थे। एक दिन मैं इनके पास बैठा और अचानक मेरे मुख से निकला, भाई साहिब जी! आपकी दुनिया में तो अंधेरा ही अंधेरा है। दिन को भी अंधेरा, रात को भी अंधेरा। मालूम है उन्होंने मुझे क्या कहा? मसकीन जी! मैंने कभी अंधेरा नहीं देखा। मैंने कहा, कह क्या रहे हो? जन्म से अंधे हैं और कहते हैं मुझे अंधेरे का कोई ज्ञान नहीं। उस दिन से मुझे समझ आई कि अंधेरे को देखने के लिए भी आँखों में रोशनी चाहिए। अपनी मूर्खता देखने के लिए भी कुछ बुद्धि चाहिए। अपनी गलतियों को देखने के लिए भी तो कुछ न कुछ समझ चाहिए। मैंने कहा भाई साहिब जी! आपके इन दो बोलों से मुझे समझ मिल गई। बहुत से अज्ञानियों को अज्ञान दिखाई नहीं देता। पूरी जिन्दगी अमावस्या बनी रही तो बाहर की दीवालियाँ निरर्थक हो गईं। बाहर तो रोशनी कर ली, अंदर घोर अंधेरा।।

मन रे संसारु अंध गहेरा।। **(अंग ६५४)**

सत्संग का फल, कथा कीर्तन का फल, वाणी पढ़ने का फल, पता क्या है? अंधेरा दिखाई देगा। डाक्टर जब भी किसी की आँखों का ऑपरेशन करता है और जिस दिन उसकी पट्टी खोली जाती है, डार्क रूम में खोलते हैं। धीरे-धीरे डाक्टर पट्टी खोलता है और खोलने के पश्चात डाक्टर मरीज को यह कहता है कि धीरे-धीरे आँखे खोल। वह खोलता है, कुछ दिखाई दिया है। अगर मरीज कह दे अंधेरा दिखाई देता है तो डाक्टर खुश हो जाता है। ऑपरेशन कामयाब।

कथा, कीर्तन, पाठ का फल उसको उस दिन प्राप्त हो गया। जिस दिन अपना अज्ञान दिखाई देने लग पड़ा। भूलें, मूढ़ता, गलतियाँ दिखाई देने लग पड़ी हैं तो गुरु खुश हो जाता है कि इसको आँखें मिल गईं हैं। इसको अपने

गुनाह दिखाई देने लग पड़े हैं, अब इसको परमात्मा के गुण भी दिखाई देंगे। इसको अपना अज्ञान दिखाई दे रहा है, अब भगवान भी दिखाई देगा। जिसको अपना अज्ञान दिखाई नहीं देता उसके लिए ज्ञान है ही नहीं। जिसको अपने पाप नहीं दिखाई देते, उसके लिए पुण्य कहाँ। शायद वह जो पुण्य कर रहा है, वह भी पाप है। क्योंकि उनके सभी पुण्यों की आधार शैली ही पाप होगी। अंधेरा दिखाई देना चाहिए तो ही मैंने दीप जगाना है। कभी कभी कई ऐसे हैं जो सूर्य की तरह हो जाते हैं, हमेशा ही रोशनी। हम परमात्मा के हिस्से हैं।

कहु कबीर इहु राम की अंसु॥ जस कागद पर मिटै न मंसु॥

(अंग ८७१)

अगर राम के अंश हैं तो फिर अंधेरा क्यों? यह जमीन एक तरफ हो जाती है, सूरज की किरणें नहीं पहुँचती। मनुष्य अपनी जिन्दगी में अंधेरा बड़ी आसानी से कर सकता है, आँखें बंद करो अंधेरा। कई मनुष्य आँखें खोलते ही नहीं, यह कीर्तन इसलिए है, बुद्धि की आँखें खुलें। यह पाठ इसलिए है, बुद्धि की आँखें खुलें। आँखें बंद करने की आदत ही पड़ गई है। एक वो अंधा है जिस की आँखों में रोशनी नहीं, एक वह अंधा है, जो आँखें खोलता ही नहीं। ऐसे अंधे बहुत कम हैं जिनके पास आँखें नहीं हैं। एक दम पशु योनि को त्याग कर जो मनुष्य बने हैं, उनमें पशुवृति बहुत ज्यादा होता है। बार-बार जन्मा है, बार-बार मरा है-

जमि जमि मरै मरै फिरि जंमै॥ (अंग १०२०)

कई दफा मनुष्य बना है तो इसके पास तजुर्बे और अनुभव बढ़ जाते हैं। इसकी जिन्दगी में रात लम्बी नहीं होती, कुछ बुद्धि आ जाती है। एक दम पशु से जो मनुष्य की जिन्दगी में आया है, अंधेरे में ही होता है, आँखें खोलता ही नहीं। जैसे देखते हैं पशुओं के बहुत से बच्चों की जन्म से आँखें बंद होती हैं। धीरे-धीरे खुलेंगी। कुत्ते के पिल्ले, जन्म से आँखें बंद होती हैं। धीरे-धीरे आँखें खुलती हैं। बहुत से चौपाए जानवर, पंछी अंधे हैं। जन्म से अंधे हैं, फिर नेत्रवान हो जाते हैं। जीवन में नेत्रवान हो जाते हैं। पदार्थ, संसार दिखाई देने लग जाता है। मगर मानसिक तल पर मनुष्य जन्म से अंधा है, जीवन भी अंधा, मरते वक्त भी अंधा। जिन्दगी में कभी दीवाली हुई नहीं। अंदर तो अमावस्या बनी रही। अंधेरा इसलिए बना रहा कि आँखें खुली नहीं।

यह धर्म ग्रंथों का पाठ पापों की मत को खा जाता है। इस तरह खा जाता है जैसे दीया जलाएँ तो जलता हुआ दीया अंधेरे को खा जाता है। मगर शर्त है पाठ मन ने किया हो क्योंकि अंधेरा तो मन के तल पर है। इन आँखों के तल पर तो अंधेरा नहीं है।

दीवा बलै अंधेरा जाइ॥ बेद पाठ मति पापा खाइ॥

(अंग ७९१)

यह पाठ धर्म ग्रंथों का, वेदों का, ज्ञान का पापों की मत को खा जाएगा। यह मनुष्य अब पाप नहीं कर सकेगा। पाठ करते हुए भी पाप कर रहा है। इसके मन ने कभी पाठ नहीं किया।

मन करि कबहू न हरि गुन गाइओ॥ (अंग १२३१)

जुबान से वाहिगुरु वाहिगुरु करता रहा मगर इसमें तेरा मन तो कभी शामिल नहीं हुआ। अंधेरा किस तरह मिटे? पाठ कर रहा है। पाप भी कर रहा है, मगर पाठ नहीं किया। गुरुद्वारे भी आ रहा है और पाप भी कर रहा है और दावे से कहा जा सकता है कि गुरुद्वारे नहीं आया। सारा अंधकार खत्म हो जाता हैं जब मनुष्य पाठ करता है। यह नहीं कि मेरे पाप धीरे-धीरे मिटेंगे। यह नहीं कि एक कमरे में अंधेरा था पचास साल से और इस अंधेरे को अब मिटाने के लिए मुझे पचास वर्ष लगेगें। ऐसा नहीं है। एक सैकेण्ड में अंधेरा जा सकता है अगर मैं बत्ती जगाऊँ। एक दफा वाहिगुरु कहते यह अंधेरा जा सकता है। मगर शायद करोड़ दफा कहते भी न जाए।

आज का जो पावन वाक्य है, यह सभी स्त्री के बोल हैं। पुरुष के भीतर स्त्री अधूरी है, स्त्री के भीतर पुरुष अधूरा है। कोई पुरुष है उसके बोलों में स्त्री आ गई है, पूर्ण पुरुष हो गया है। कोई स्त्री है और उसके बोलों में पुरुष आ गया है, यह पूर्ण स्त्री है। वह देवता है, यह देवी है। स्त्री के बोलों में पुरुष नहीं प्रगट हुआ, अधूरी है। पुरुष के बोलों में स्त्री नहीं प्रगट हुई, अधूरा है। मैं नीतिशे के विचार पढ़ रहा था और हैरान हुआ। वह कहता है गुरु नानक, कबीर और महात्मा बुद्ध इनके पास जो चित्त दशा है, स्त्री की है। तो ही स्त्री के बोल बोलते हैं। बाद में वह कहता है कि भारत के बहुत सारे संतों के पास चित्त दशा स्त्री की है। आज का हुक्मनामा भी इसी तरह का है। कहें गुरु नानक को कि आपके पास तन पुरुष का है, वह तो है। मां बाप से शरीर आया, अगर

वह पुरुष है तो उसमें पिता का अंश तो पूरा है पर मां का अधूरा है। यदि कोई स्त्री है, उसके अंदर मां तो सम्पूर्ण है पर पिता अधूरा है।

पुरख महि नारि नारि महि पुरखा बूझहु ब्रहम गिआनी ।।

(अंग ८७९)

हे ब्रह्मज्ञानियो! इसे तो समझो कि स्त्री शरीर के भीतर तो पुरुष भी है। पुरुष शरीर के भीतर स्त्री भी है। इसलिए मानसिक गुण स्त्री के पास पुरुष के होंगे मगर अधूरे। मानसिक गुण पुरुष के पास भी स्त्री के होंगे मगर अधूरे। जिस दिन इसका पुरुष तत्व सम्पूर्ण हो जाएगा, देवी हो जाएगी। यह संसार की शोभा इस तरह हो जाएगी जैसे मंदिर की शोभा कोई देवी। यह पुरुष संसार की महिमा इस तरह हो जाएगा जैसे मंदिर की कोई मूर्ति देवता की। इसने किसे पूजना है, यह तो स्वयं पूज्य हो गया है। जब स्वभाव में स्त्री तत्व सम्पूर्ण हो जाए तो पहचान क्या होगी? बोलों में कोमलता आ जाएगी, मधुरता आ जाएगी, नम्रता आ जाएगी, शिष्टता आ जाएगी और दास भाव पैदा हो जाएगा। स्त्री के भीतर पुरुष तत्व पैदा हो गया तो साहस पैदा हो जाएगा, हिम्मत पैदा हो जाएगी, डरपोक नहीं रहेगी। अभी स्त्री के पास श्रद्धा है, अंधी है। अभी तो पुरुष के पास तर्क है, लंगड़ा है। देवते चाहते हैं जन्म हो तो मुक्त हों। अब जन्म तो हो अगर उनके अनुकूल कोई मां मिले। गर्भ तो हर समय उपलब्ध है सारी दुनिया में। पर कोख में उसकी चेतना प्रवेश करेगी जिस मां के साथ उसके संस्कारों का मेल जुड़ जाए। यही कारण है कि कोख बुरी है तो बुरी आत्माओं को जन्म देने में समर्थ हो जाती है। इसलिए सारी दुनिया में कोई बुरा बच्चा पैदा हो गया है, बच्चे को कुछ नहीं कहते, मां को गाली निकालते हैं। पहले मैं सोचता था यह मां के साथ बेइन्साफी है। गलती बच्चा करता है तो गालियाँ मां को। दूर क्यों जाऊं, गुरु रामदास जी भी चेतावनी देते है मां को–

जिन हरि हिरदै नामु न बसिओ तिन मात कीजै हरि बांझा ।।
तिन सुंञी देह फिरहि बिनु नावै ओइ खपि खपि मुए करांझा ।।

(अंग ६९७)

जिस हृदय में प्रभु का नाम नहीं बसा, वह मां तो इस तरह हो जाती है जैसे बंजर जमीन कभी हरी नहीं होती, इसकी गोद हरी क्यों हुई है। इतनी कोमल आत्मा, इतनी मधुर आत्मा, इस तरह के कड़वे बोल मां के प्रति। श्री गुरु नानक

देव जी कहते हैं, मां का जीवन जब बहुत ही भ्रष्ट हो जाए, सांसारिक हो जाए, पिता बिल्कुल संसारी हो जाए तो इनके घर कौन पैदा होंगे? गुरु नानक बताते हैं–

कली अंदरि नानका जिंनां दा अउतारु॥
पुतु जिनूरा धीअ जिंनूरी जोरू जिंना दा सिकदारु॥
(अंग ५५६)

घर में पुत्र पैदा होंगे जिन्न–भूत। पारिवारिक जीवन इतना भ्रष्ट हो गया है कि संसार में जितनी मलीन आत्माएँ हैं, सभी पैदा हो रही हैं। भूत पैदा हो रहे हैं, प्रेत पैदा हो रहे हैं। वह जो संसार में देव मौजूद हुए उनको अवसर नहीं मिला। वह बेचारे इन्तजार में हैं।

इस देही कउ सिमरहि देव॥ **(अंग ११५९)**

कोई देवी मां हो तो देवी को जन्म दे। भूत आ रहे हैं, प्रेत आ रहे हैं, पिशाच आ रहे हैं। पूरी दुनिया में युवाओं के जरिए इतने उपद्रव। बच्चों की इस तरह की जिन्दगी क्या काबू नहीं। न माता–पिता के काबू, न अध्यापकों के काबू, किसी के काबू में नहीं। परमात्मा की कोई समझ नहीं इनको और बिना समझ से कह दिया है, नहीं है। इनसे पूछे कोई परिश्रम किया? कोई साधना की? बिना साधना के, बिना परिश्रम के कोई कह देता है, नहीं है और बिना साधना के, बिना परिश्रम के कोई कह देता है, है। वह जो कहता है कि परमात्मा है, उसका कहना भी बहुत कमजोर है और जो कहता है, नहीं है, उसका कहना भी बहुत कमजोर है क्योंकि दोनों ने खोज नहीं की। जो कहता है नहीं है, उसका कहना भी अज्ञान पर खड़ा है और जो कहता है परमात्मा है, उसका कहना भी अज्ञान पर खड़ा है। दोनों की आधारशिला अज्ञान है। यही कारण है जो कहता है उसका असर नहीं पड़ता क्योंकि उसका ऐसे कहना अज्ञान की वजह से है, समझ उसे भी कोई नहीं है। रस उसने भी नहीं माना, देखा उसने भी कुछ नहीं।

हजूर साहिब बाबा निधान सिंघ के डेरे में मालूम नहीं कितने समय तक कोई ऐसी चेतना थी जो मुक्त नहीं हुई थी। किसी को तंग नहीं करती थी, किसी का नुक्सान नहीं थी करती। मगर उसने अमृत समय बर्तन खड़खड़ा देने ताकि जो सोए पड़े हैं उठें। दिखाई कुछ नहीं देता था। मगर लंगर के सभी

बर्तन खड़कने लग पड़ते थे। यह मैं इसलिए कह रहा हूँ, कहीं मुझे वहमी न समझ लें। वहमी तब समझ सकते थे अगर गुरुबाणी की पंक्तियाँ नहीं होती–

कई कोटि भूत प्रेत सूकर म्रिगाच॥ (अंग २७६)

अगर जमीन पर इस समय 6 अरब के लगभग मनुष्य है तो संसार में अरबों–खरबों ऐसी रूहें हैं जिनको हम देव कह सकते हैं, भूत–प्रेत कह सकते हैं। इनके ही जन्म होंगे। कुछ पशु है, पशु तन त्याग कर मनुष्य बनते हैं। इस तरह के मनुष्य बहुत अचेत होते हैं। पशुओं की आखिरी कड़ी जैसे हाथी है, घोड़ा है, गाय है, मोर है, हंस है यह पशुओं का शिखर है। अगर शिखर है तो मनुष्यता का सूत्रपात है। जब कोई पशु, पशुओं के शिखर पर पहुँच जाता है तो वह मनुष्यता के आरम्भ काल में पांव रख देता है। जब मनुष्य, मनुष्यों के शिखर पर पहुँचता है तो संत हो जाता है, परमात्मा हो जाता है। अवसर ऐसा परमात्मा ने दिया है। यह वाक्य इस बात का सबूत है। श्री गुरु नानक देव जी पूर्ण पुरुष हैं। पूर्ण पुरुष वह हैं, जिसके भीतर पुरुष तत्व भी पूरा है, स्त्री तत्व भी पूरा है। भक्ति भी पूरी है, ज्ञान भी पूरा है। स्त्री वही पूरी है जिसके भीतर ज्ञान भी पूरा है, भक्ति भी पूरी है। कई बार भक्ति तो होती है, श्रद्धा तो होती है मगर ज्ञान नहीं होता। अंधी श्रद्धा की वजह से एक डेरे से दूसरे डेरे, कभी पीपल को माथा टेके, कभी बरगद को, कभी पूर्णिमा के चक्रों में, कभी अमावस्या के चक्रों में, कभी किसी कब्र के चक्र में। श्रद्धा तो है मगर अंधी है। तर्क तो है मगर विकलांग है। वह लंगड़ा तर्क परमात्मा तक पहुँचने में असमर्थ है। यह अंधी श्रद्धा परमात्मा को देखने में असमर्थ है। जब तर्क सम्पूर्ण हो, पाँवों वाला हो, उसमें गति हो और श्रद्धा नेत्रवान हो तो वह मनुष्य फिर परमात्मा तक पहुँचता है। श्री गुरु नानक देव जी का यह पावन पवित्र हुक्मनामा आप श्रवण करें।

धनासरी छंत महला १॥

पिर संगि मूठड़ीए खबरि न पाईआ जीउ॥

यह छंद है और पद इसमें पांच हैं। यह पांच पद हैं। पाँच चरणों के ऊपर किसी एक विचार को मेरे गुरु ने चलाया है। पहला पद सतिगुरु बयान करते हैं। मूठड़ीऐ कहते हैं जगत् की ठगी हुई। यह जीव–स्त्री ठगी गई है। परमात्मा पति की सार नहीं जानतीं। माया से ठगी गई, जगत् से ठगी गई, परमात्मा की

ख़बर ही न प्राप्त कर सकी। हो स्त्री और पति का कोई बोध न हो, पति का कोई ख्याल न हो। हो जीवन चेतना और परमात्मा का कोई ख्याल न हो, समझ न हो, यह तो ठगी गई। यह तो पदार्थों को देखकर परमात्मा को भूल गई। यह घर का साजो-समान देख कर ही पति को भूल गई। यह तो धन संपदा, अपना रंग रूप देख कर पति को भूल गई। साहिब कहते हैं कि ठगी गई स्त्री, परमात्मा की ख़बर ही नहीं प्राप्त की। यह तो जगत् में ही उलझ कर रह गई। सबकी ख़बर है, पर पति की ख़बर नहीं।

मसतकि लिखिअड़ा लेखु पुरबि कमाइआ जीउ॥

मगर साहिब कहते हैं कि क्या किया जाए, इस तरह परमात्मा का विधान है। एक बार गलती करें तो गलती के संस्कार भीतर लिखे जाते हैं। लिखी हुई गलती फिर गलती करवाती है। एक गलती से कई गलतियों के संस्कार बनते हैं। जैसे एक बोए हुए बीज से कई बीज बनते हैं। इस तरह लेख जो भीतर बनते हैं, इनको संस्कार कहते हैं। यह नहीं कि कोई अलग गुप्त बैठा है और मेरे कर्म लिखता है, नहीं। इधर मैं किए जाता हूँ, इधर मेरे भीतर लिखे जा रहे हैं। कागज मेरे भीतर हैं। यह नहीं कि बाद में कोई चित्रगुप्त लिखता है। मैंने कोई गलत काम किया और फल भी उसी समय। मेरे दिल दिमाग पर बोझ पड़ेगा अगर कुछ मैंने ठीक किया तो फल और खुशी भी तत्क्षण मिलेगी। उस समय भी फल हैं और फल लम्बे समय तक भी हैं। पाप का फल उसी समय भी है और लम्बे समय तक भी है। जैसे हाथ जल गया है और उसी समय मुझे जलन हुई। मैं तड़पा और जलने का एक दाग भी रह गया। मैंने पाप किया है, उसी समय मुझे फल भी मिल गया है। अब संस्कार पाप के साथ चलेंगे। यह तो लेख लिखा गया है। इस तरह यह लेख जमा होते रहते हैं। इन पूर्व लेखों ने इस तरह की गलती इससे करवाई।

लेखु न मिटई पुरबि कमाइआ किआ जाणा किआ होसी॥

साहिब कहते हैं मालूम नहीं अब क्या होना है? क्योंकि परमात्मा का विधान है कि पूर्व किया मिटता नहीं।

आपि बीजि आपे ही खांहि॥ (अंग ११९२)

जो मैंने बोया है। मैं खाऊँगा और मिटेगा ऐसे नहीं। मैंने किया, मैं भोगूँगा

तो मिटेगा, ऐसे नहीं। जो तू कर चुका है, इसका मेरे पास कोई इलाज नहीं, यह भोगने के लिए तू तैयार हो जा।

गुणी अचारि नही रंगि राती अवगुण बहि बहि रोसी।।

गुण कोई नहीं, सदाचार कोई नहीं, नाम का रंग कोई नहीं, सिर्फ अवगुण ही अवगुण हैं। यह तो बैठ-बैठ कर रोना ही होगा। यह तो दुख भोगना ही होगा।

_धनु जोबनु आक की छाइआ बिरधि भए दिन पुंनिआ।।_

यह परमात्मा पति भूला क्यों? धन के कारण, यौवन के कारण। भक्त कबीर कहते हैं-

_बेद पड़े पड़ि पंडित मूए रूपु देखि देखि नारी।।_

(अंग ६५४)

लोग किस तरह ख्वार होते हैं, फिर नारी का भी जिक्र करते हैं कि नारी किस तरह समय बर्बाद करती है। **रूपु देखि-देखि नारी।।** यह अपना ही रूप देख-देख कर ख्वार हो जाती है। हर समय अपने मुँह को श्रृंगार करना। ठीक है साफ-सुथरा रहना अच्छा है। मगर हर समय आईने के आगे मुख देखते-देखते ऐसी आदत बन गई है कि अब कभी परमात्मा का मुख देखने का ख्याल ही नहीं आया। धन और यौवन इतना याद आया कि परमात्मा याद ही नहीं आता। साहिब कहते हैं यह तो आक की छाया है। आक एक छोटा सा पौधा है। इसकी छाया इतनी सी होती है? क्या हम इसकी छाया में बैठ सकते हैं? यह जवानी, यह धन आक की छाया है। मलीन होते देर नहीं लगती और इस छाया के नीचे तू पूरा सुख भी मान नहीं सकता। मगर धन और यौवन ने ही परमात्मा का नाम भुला दिया है। अब दिन गुजर गए, वृद्ध हो गया।

_नानक नाम बिना दोहागणि छूटी झूठि विछुंनिआ।। १।।_

यह नाम के रस के बिना, नाम के जप के बिना इस तरह है, जैसे दुहागिन, जैसे पति के द्वारा छोड़ी हुई। छोड़ दिया है प्रभु ने। यह तो इस तरह जिन्दगी व्यतीत करती है जैसे किसी स्त्री को पति ने छोड़ दिया हो। इसकी भटकना अब चल रही है। साहिब कहते हैं-नाम के बिना यह हालत मनुष्य की होती

है।

बूडी घरु घालिओ गुर कै भाइ चलो॥

हे डूबी हुई जीव-स्त्री! तूने तो अपना घर डूबो लिया है। पानी का स्वभाव नहीं है डूबो लेना। बिल्लियाँ नहीं डूबती, कुत्ते नहीं डूबते, भैसें नहीं डूबती, घोड़े नहीं डूबते, शेर नहीं डूबते। सभी तैरते हैं। व्यक्ति डूब जाता है। पर जो व्यक्ति मर गया है वह नहीं डूबता। मुर्दा नहीं डूबता, जिंदा डूबता है। इसका मतलब अपना संतुलन गंवा बैठता है। संसार, परिवार, पदार्थ, धन, संपदा, प्रभुता नहीं डूबती। डूब जाता है मनुष्य, अपना संतुलन बिगाड़ बैठता है। अत्यंत लोभी, अहंकारी हो जाता है। गुरु की मर्जी में चल।

साचा नामु धिआइ पावहि सुखि महलो॥

अगर तू सच नाम में अपना मन जोड़े तो तुम्हें सुख के महल की प्राप्ति हो। सच के ठिकानों की प्राप्ति हो।

हरि नामु धिआए ता सुखु पाए पेईअड़ै दिन चारे॥

यह संसार तो चार दिन है। यहाँ तुम्हें हमेशा रहना नहीं। जाना ही पड़ता है। मगर आगे जा कर तू सुखी हो सकती है, अगर तेरे पास नाम पदार्थ हो। परमात्मा का जप हो तो ही तू परमात्मा के दर पर मान-सम्मान प्राप्त कर सकती है और सुख से रह सकती है।

निज घरि जाइ बहै सचु पाए अनदिनु नालि पिआरे॥

अगर कहीं दिन रात तू नाम जपे तो सच की प्राप्ति कर ले, फिर तुझे निज घर की प्राप्ति हो जाए। ऐसा ठिकाना जो सदैव है, ऐसा सिंहासन महल जो संदैव है।

विणु भगती घरि वासु न होवी सुणिअहु लोक सबाए॥

हे दुनिया के लोगो! एक बात सुन लो, परमात्मा के घर में बिना भक्ति के स्थान नहीं मिलेगा। बिना भावना के बात नहीं बनेगी। भावना ही नहीं तो कीर्तन, वाणी क्या पढ़ी? भावना ही नहीं तो क्या गुरुद्वारे आया तू?

नानक सरसी ता पिरु पाए राती साचै नाए॥ २॥

साहिब कहते हैं, अगर सच नाम में लीन हो जाए तो तेरा जीवन रसदायक हो जाए। जीवन में कुछ रस आ जाए, आनंद आ जाए। ऐसा हो सकता है अगर नाम में लीन हो जाएँ।

पिरु धन भावै ता पिर भावै नारी जीउ॥

अगर इसके भीतर भावना पैदा हो जाए तो फिर यह परमात्मा को भा सकती है। यह जो नारी है, यह फिर शोभायमान हो सकती है। प्रभु के दर पर मान-सम्मान पा सकती है। कौन? जिसके भीतर भावना पैदा हो जाए।

रंगि प्रीतम राती गुर कै सबदि वीचारी जीउ॥

अगर कहीं गुरु के शब्द की विचार करें तो यह जीव-स्त्री प्रीतम के रंग में रंगी जा सकती है।

गुर सबदि वीचारी नाह पिआरी निवि निवि भगति करेई॥

इस विचार के बदौलत नाम जपे तो फिर नाम की लीनता इसको नसीब हो सकती है। यह रस इसको प्राप्त हो सकता है।

माइआ मोहु जलाए प्रीतमु रस महि रंगु करेई॥

यह जो माया का मोह है, प्रीतम का रस, प्रीतम का रंग उस माया के मोह को जला कर रख देता है। भाव माया इसको नहीं जलाती, यह नाम जप कर माया को खाक कर देता है। दो ही काम हैं या तुम माया को जलाओ या माया तुम्हें जलाएगी। इसको जला दो तो यह जल सकती है। इसको नहीं जलाया तो फिर यह जलाएगी। दैवी गुणों को जलाएगी, मनुष्यता को जलाएगी, इन्सानियत को जलाएगी। ऐसे मनुष्यों के भीतर इन्सानियत भी नहीं रहेगी। इसलिए साहिब कहते हैं कि जो जीव-स्त्री गुरु-शब्द का विचार करती है, वह माया के मोह को जला कर राख कर देती है।

प्रभ साचे सेती रंगि रंगेती लाल भई मनु मारी॥

जो सच के रंग में रंगी हुई है, लाली चढ़ी हुई है उसको। कुछ विद्वानों की पकड़ में यह बात आई है कि बाहर का रंग जो मनुष्य को ज्यादा प्रभावित

करे, उसके साथ उसकी मानसिक अवस्था का पता चलता है। खून का रंग लाल है, खून सफेद हो गया तो मनुष्य मुर्दा है। कहते हैं इसी तरीके से प्रेम का रंग भी लाल है।

लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा॥
मैला कदे न होवई नह लागै दागा॥

(अंग ८०८)

इसलिए प्रेम को रत्त भी कहते हैं और रत्त का अर्थ खून भी हैं। जो प्रेम में रत्ती गई, उसके ऊपर लाली चढ़ गई और परमात्मा को कबूल हो गई। शारीरिक जीवन लाल है, मांस भी किसी हद तक लाल है, खून भी लाल है, प्रेम भी लाल है। इसलिए कहते हैं कि इसे लाली चढ़ी हुई है। साहिब कहते हैं, जैसे ही मन माना इसके नाम में, इसे लाली चढ़ गई है। परमात्मा को कबूल हो गई है।

नानक साचि वसी सोहागणि पिर सिउ प्रीति पिआरी॥ ३॥

परमात्मा की प्रीत कारण यह रस से भर गई है और परमात्मा के दर पर ठिकाना नसीब हो गया है।

पिर घरि सोहै नारि जे पिर भावए जीउ॥

अगर परमात्मा को भा गई है तो इस तरह की नारी अपने घर में शोभायमान है भाव सुख से रहती है।

झूठे वैण चवे कामि न आवए जीउ॥

अगर झूठ में फँस जाए भाव मिथ्या पदार्थों का मोह इतना पकड़ ले और सच को भूल जाए। फिर यह अवस्था आगे काम नहीं आती भाव परमात्मा कबूल नहीं करता।

झूठु अलावै कामि न आवै ना पिरु देखै नैणी॥

जो बार बार झूठ बोलती है, जिसकी जुबान पर झूठ है, वह परमात्मा को अच्छी नहीं लगती। उसको सही ठिकाना नसीब नहीं होता।

अवगुणिआरी कंति विसारी छूटी विधण रैणी॥

अवगुणों से जो भरी हुई है और परमात्मा को जो भूली हुई है भाव परमात्मा को जो भुला कर बैठी हुई है, पति के बिना है। समझ लो इसका कोई पति नहीं। यह तो पति के बिना हो गई। यह तो परमात्मा के बिना हो गई। यह तो परित्यक्ता हो गई। भटकना इसकी जिन्दगी में है। किसकी जिन्दगी में? जिसके जीवन में अवगुण ही अवगुण हैं और गुणों को जिसने भुला दिया है।

गुर सबदु न मानै फाही फाथी सा धन महलु न पाए॥

जिसने गुरु शब्द द्वारा गुणों को ग्रहण किया, परमात्मा के प्यार को जगह दी है, परमात्मा के दर पर वह कबूल हो गई, परमात्मा को वह प्यारी लगी।

नानक आपे आपु पछाणै गुरमुखि सहजि समाए॥ ४॥

जो गुरु को मुख्य रख कर जीवन व्यतीत करती है, आखिर में वह सच में समा जाती है, परमात्मा का रूप हो जाती है, एक हो जाती है।

धन सोहागणि नारि जिनि पिरु जाणिआ जीउ॥

धन्यता के योग्य है वह स्त्री जिसे परमात्मा का ज्ञान मिला, परमात्मा की समझ मिली, परमात्मा का बोध मिला।

नाम बिना कूड़िआरि कूड़ु कमाणिआ जीउ॥

एक नाम के जप के बिना, एक परमात्मा के ज्ञान के बिना जो कुछ भी किया है झूठ है। जीना झूठ, मरना झूठ, देखना झूठ, करना झूठ, पूरी जिन्दगी झूठ में ही उसकी व्यतीत हुई।

हरि भगति सुहावी साचे भावी भाइ भगति प्रभ राती॥

परमात्मा की भावना को जिसने अपने भीतर जगह दी और परमात्मा के प्यार में जो रंगी गई, वह परमात्मा को भा गई। परमात्मा की कृपा की वह पात्र बनी।

पिरु रलीआला ज़ोबनि बाला तिसु रावे रंगि राती॥

उसको ऐसा परमात्मा मिला, ऐसे रंग में रंगी गई जो कभी पुराना नहीं होता, कभी बूढ़ा नहीं होता, सदा ही जवान है भाव वह रंग कभी फीका नहीं पड़ता, सदा ही बढ़ता जाता है। मनुष्य के प्राणों में प्यास है कि ऐसा धन मिले जो

बढ़ता जाए, बढ़ता जाए, कभी कम न हो, उस परम धन का नाम ही परमात्मा है। मनुष्य को ऐसा जीवन चाहिए जिसमें कभी मृत्यु न हो, उस परम जीवन का नाम ही परमात्मा है। मनुष्य को ऐसा रस चाहिए जो कभी बेरसी में न बदले, उस परम रस का नाम ही परमात्मा है। मनुष्य को ऐसी प्रतिष्ठा चाहिए जो कभी बेइज्जती में न बदले, उस परम पद का नाम है परमात्मा। साहिब कहते हैं, ऐसा नित नया परमात्मा उसको प्राप्त होगा जो कभी पुराना नहीं होता, कभी कम नहीं होता, कभी मिटता नहीं।

गुर सबदि विगासी सहु रावासी फलु पाइआ गुणकारी॥

गुरु शब्द के साथ जुड़कर इसको फल मिले परमात्मा के गुण और जैसे ही परमात्मा के गुणों की प्राप्ति हुई, परमात्मा के घर में इसको बसेरा मिल गया। अकाल पुरुख के घर में इसको बसेरा मिल गया। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए कई जन्म लगेंगे, कई वर्ष लगेंगे, नहीं। तन को भागने, दौड़ने के लिए स्थान चाहिए। जगह ही नहीं, चार फुट जगह हो, मैं कहाँ भागूँ, दौड़ूँगा, बैठा ही रहूँगा। तन को कुछ काम करने के लिए भागने, दौड़ने के लिए स्थान चाहिए। मन को भटकने के लिए समय चाहिए। शरीर दौड़ता, भागता है स्थान में, जगह ही नहीं है तो कहाँ भागेंगे। मन चला जाता है भूतकाल में, मन चला जाता है भविष्य में, भविष्य, भूतकाल बड़ा लंबा है। मन को दौड़ने के लिए चाहिए समय। अगर जगह ही नहीं तो मैं कहाँ भागूँगा, दौड़ूँगा और अगर समय ही नहीं तो मन कहाँ भटकेगा। इसलिए परमात्मा का एक नाम है अकाल। काल कहते हैं समय को। परमात्मा में समय नहीं है, इसलिए परमात्मा में भटकाव नहीं है। कहते हैं फल की कामना न करो। कामना तो भविष्य में ले जाएगी, फिर नाम क्या जपोगे। कामना कारण जो नाम जप रहा है, इतनी बात मैं दावे से कहता रहा हूँ कि नाम नहीं जप रहा। यह तो भविष्य में जी रहा है। काल खो जाए तो अकाल की प्राप्ति हो सकती है। कैसे खो गए? पूरी दुनिया में महामंत्र हैं। जैसे इस्लाम में अल्लाहू, हिन्दुओं में ओम नमः शिवाय, राम, ओम, हमारे में मंत्र है वाहिगुरु। वैसे हजारों नाम हैं श्री गुरु ग्रंथ साहिब में। ऐसा नाम, मन में आ जाए तो समय खो जाए। जैसे मन समय से बाहर निकलता है तो मनुष्य की दुनिया में परमात्मा प्रगट हो जाता है। तुम कहोगे मन समय से बाहर किस तरह निकला है? हर मनुष्य का मन समय में है या गुजरे हुए समय की यादों में बैठा है या आने वाले समय की चिन्ता में। कोई चिन्ता में बैठा है,

कोई यादों में बैठा है। कभी-कभी ऐसा होता है कि मनुष्य संगीत सुन कर कह देता है कि फलां गीतकार ने तो समय को बांध कर ही रख दिया। चार घंटे ऐसे गुजर गए जैसे चार मिनट। मगर चार मिनट तो हैं। समय कम हो गया, समय खत्म नहीं हुआ। एक ऐसी अवस्था है कि समय मिट जाता है। कई दफा समय लंबा भी हो जाता है। मनुष्य बेचैन बैठा है, परेशान बैठा है, बेरस बैठा है। कहता है, एक मिनट ऐसे गुजर रहा है जैसे एक दिन।

चारि पहर चहु जुगह समाने॥ (अंग ३७५)

गुरु अर्जुन देव जी महाराज कहते हैं कि तुम्हारे बिछोड़े के दुख में दिन के चार पहर लाखों वर्षों जैसे हो गए हैं। मन टिक जाए तो समय खो जाना चाहिए। यह समय कैसे खत्म हो? वाहिगुरु मंत्र यह एक सैकेण्ड में उच्चारण कर लेंगे। पहले मन एक सैकेण्ड में आ जाए। समय सारा ही खो जाए। वाहिगुरु, इतना अब एक सैकेण्ड में कहा, हो गया है। एक दम एक सैकेण्ड है।

टुकु दमु करारी जउ करहु हाजिर हजूरि खुदाइ॥

(अंग ७२७)

एक दम में कहीं टिक जाए तो परमात्मा प्रगट हो जाए। एक दम, यही हमारे पास है। जो दम अभी आया नहीं, उसका क्या पता? जो दम चला गया मैं खर्च नहीं कर सकता। एक दम मेरे पास है। इसी एक दम में मैं परमात्मा को प्राप्त कर सकता हूँ। एक दम में घर बनाना बड़ा मुश्किल है। लंबी यात्रा करनी बहुत मुश्किल है। विकसित व्यापार करना मुश्किल है। विद्या हासिल करनी बहुत मुश्किल है, पर एक दम में परमात्मा प्राप्त हो सकता है। सबसे आसान काम है परमात्मा को प्राप्त करना, सबसे मुश्किल काम है परमात्मा को प्राप्त करना। सब से आसान काम इसलिए एक मिनट में मिलता है, एक सैकेण्ड में मिलता है। एक क्षण में, एक क्षण में सारे जन्मों-जन्मांतरों के बंधन टूट जाएँगे।

निरबाण कीरतनु गावहु करते का निमख सिमरत जितु छूटै॥

(अंग ७४७)

निमेष एक सैकेण्ड। सबसे मुश्किल काम है परमात्मा को मिलना, क्योंकि एक सैकेण्ड में आना बड़ा मुश्किल है। करोड़ बार वाहिगुरु वाहिगुरु कहते हुए एक पाप भी नहीं मिटेगा। एक दफा वाहिगुरु कहते सारे पाप मिट जाते

हैं। एक दफा वाहिगुरु मैंने कहा सैकेण्ड में पूरा ध्यान मन मेरा यहाँ आ जाए। न भविष्य की चिन्ता न भूतकाल की यादें, परमात्मा प्रगट हो जाएगा। मैंने करोड़ दफा वाहिगुरु वाहिगुरु इसलिए कहना है ताकि कहीं एक दफा वाहिगुरु कहने का ढंग आ जाए। मिलेगा एक क्षण में, भक्तों की दुनिया में आज क्या है? कहते हैं आज करेंगे। आज से अभिप्राय सारा दिन नहीं है, आज से अभिप्राय सारी रात नहीं है। भक्तों की दुनिया में आज का मतलब है एक सैकेण्ड, एक दम। जो दम चला गया, वह आज नहीं है और जो दम अभी आया नहीं वो भी आज नहीं है।

आजु मिलावा सेख फरीद टाकिम कूंजड़ीआ मनहु मचिंदड़ीआ॥

(अंग ४८८)

वह वासनाएँ जो तुम्हारे मन को भविष्य में ले जाती हैं, भूतकाल में ले जाती हैं, कहीं इन वासनाओं को एक तरफ करे तो आज में तेरा मन आ जाए, यह तो परमात्मा आज में बैठा है। जब भी सारे पाप नाश होंगे, सारे गुनाह नाश होंगे, करोड़ दफा वाहिगुरु कहने से नहीं, एक दफा कहने से। कहीं तीन दफा राम कहलवा कर लोई ने तो एक कोढ़ी का कोढ़ दूर किया था। कबीर ने कहा तूने राम नाम की तौहीन की है। एक दफा राम कहते पूरे शहर का कोढ़ दूर किया जा सकता है। यकीन मानो, एक दफा राम कहते करोड़ों जन्मों के पाप धुल जाते हैं। लाखों मन लकड़ियों को जलाने के लिए, लाखों मन आग नहीं चाहिए, एक चिंगारी चाहिए। कहीं एक दफा वाहिगुरु कहे तो इधर इस का मन सुन ले। यह एक काम कहीं व्यक्ति कर ले, बाकि सारे काम उसके परमात्मा खुद ही करता है। यह एक बहुत बड़ी सच्चाई है। मुझे अभी तक एक बार कहने की जांच नहीं आई। इतना मैं कबूल करता हूँ। इसी को मेरे गुरु ने कह दिया–

आखणि अउखा साचा नाउ॥ (अंग ३४९)

वाहिगुरु कहना क्या मुश्किल है? यह आज मुश्किल है। इतनी बात की मुझे समझ आई है कि यह भी उस परमात्मा का शुक्राना है। पूरी जिन्दगी मैं कीर्तन करता रहूँ और पाठ करता रहूँ, कुछ भी नहीं। दान पुण्य करता रहूँ तो भी कुछ नहीं। अगर घर को आग लगी हो तो व्यक्ति यह नहीं कहता है कि धीरे–धीरे बुझाओ, नहीं, कहता है जल्दी बुझाओ। इसी तरीके से अगर आदमी

को भयंकर रोग हो, बीमारी हो तो डाक्टर को यह नहीं कहता है कि धीरे-धीरे ठीक करो। नहीं, कहता है जल्दी ठीक करो। अगर नाम की बात हो तो कहते हैं धीरे-धीरे हो जाएगा। तेरे इस तरह कहने से ही नज़र आ रहा है कि तू नाम नहीं जप सकता। तृष्णा की आग तुम्हें जलाए जा रही है, क्रोध की अग्नि तुम्हें जलाए जा रही है, कहता धीरे-धीरे होगा, कभी नहीं, यह एक सैकेण्ड में होगा एक सैकेण्ड में सारा क्रोध शांत हो सकता है पर शर्त है मन एक सैकेण्ड में आ जाए। कलगीधर पिता का वाक्य है-

इक चित जे इक छिन धिआइउ॥
काल फास के बीच न आइओ॥

एक शरीर में से किसी और शरीर को जन्म देना है तो पीड़ा में से तो गुजरना पड़ेगा। अपने में से ही परमात्मा को जन्म देना है तो आत्म पीड़ा में से गुजरना पड़ेगा।

नानक साचु मिलै वडिआई पिर घरि सोहै नारी॥ ५॥ ३॥

इस तरह की स्त्री जो सच में जुड़ गई और सच्ची प्रशंसा प्राप्त हो गई, परमात्मा के घर की शोभा बनती है, उसको मान-सम्मान मिलता है। भूल चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

जिनि साचु पछानिआ

आसा इकतुके ४॥

सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ॥
जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ॥ १॥
मारु मारु स्त्रपनी निरमल जलि पैठी॥
जिनि त्रिभवणु डसीअले गुर प्रसादि डीठी॥ १॥ रहाउ॥
स्त्रपनी स्त्रपनी किआ कहहु भाई॥
जिनि साचु पछानिआ तिनि स्त्रपनी खाई॥ २॥
स्त्रपनी ते आन छूछ नही अवरा॥
स्त्रपनी जीती कहा करै जमरा॥ ३॥
इह स्त्रपनी ता की कीती होई॥
बलु अबलु किआ इस ते होई॥ ४॥
इह बसती ता बसत सरीरा॥
गुर प्रसादि सहजि तरे कबीरा॥ ५॥ ६॥ १९॥

(अंग ४८०-८१)

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

सम्माननयोग्य गुरु रूप साधसंगत जी! कबीर जी का आसा राग में और चोताले में उच्चारण किया हुआ यह महावाक्य है। भक्तों में से कबीर जी की वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में ज्यादा है। कबीर राजनीति पर भी बोलता है, कबीर समाज के पाखंड को भी उजागर करता है, कबीर धर्म की गहराइयों को भी छूता है। आज के इस महा पवित्र वाक्य में जिस विषय को छूआ है, वह है माया। इसको साधारण लोग कहते हैं यह तो नागिन है। कबीर ने भी यहीं से बात शुरु की है कि यह तो नागिन है। हिन्दुओं ने इतिहास बनाया है बहुत सुन्दर। खीर का सागर है, दूध का समुद्र है। उसमें शेषनाग है, हजारों मूँहों वाला सांप।

उस सांप के ऊपर विश्राम कर रहे हैं श्री विष्णु। चरण दबा रही है लक्ष्मी। मैं अर्ज़ करूँ, संसार ही खीर का सागर है। संसार उस निरंकार की छाया है। छाया के बारे में आप को मालूम है कि छाया बनती है, मिटती है। संसार बनता है, मिटता है। जितना बड़ा निरंकार है, उसकी उतनी बड़ी छाया है। जितना बलवान वह खुद है और निर्बल छाया भी नहीं है। अगर निरंकार महा रस है तो बेरस माया भी नहीं है। ऐसा रस कि किसी को आगे जाने ही नहीं देता। इसलिए कबीर तर्क भी करते हैं कि क्यों इसको नागिन कहते हैं।

मैं अर्ज़ करूँ, सत्य ही यह किसी के लिए नागिन है। श्री गुरु अमरदास जी भी फ़ुरमान करते हैं–

माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दंता जगु खाइआ॥

(अंग ६४३)

दांत तो कोई नहीं, पर खा गई। सागर का पानी नहीं नापा जा सकता। कोई संसार के पदार्थों की गिनती कर सकता है? मनुष्य मिट जाता है, सोना चांदी नहीं मिटता। मनुष्य खत्म हो जाता है, संसार के रस नहीं खत्म होते। बेअंत है वह परमात्मा और बेअंत है उसकी माया। यह पदार्थों का सागर है पर केवल पदार्थों का सागर नहीं, इस सागर में हजारों मुँहों वाला सांप भी है शेषनाग। हजारों तरह के दुख-कलह भी हैं। आराम किसको मिल सकता है? जो इस शेषनाग के ऊपर अपनी 'सेज' बना ले, भाव पदार्थों से और दुखों से ऊँचा उठ जाए।

धार्मिक मनुष्य तन से, मन से ऊपर उठा होता है। पूरी दुनिया तन का जीवन जी रही है, मन का जीवन जी रही है, मगर वह ऊँचा उठा हुआ है। इसलिए संसार उससे संघर्ष करेगा। क्यों? वह संसार की मान्यताओं को नहीं मानता। जीवित मनुष्यों को खतरा है, मुर्दों को क्या खतरा। अगर बाहर बम गिर रहे हैं तो कब्र में पड़े मुर्दे को क्या खतरा है। अगर कहो बड़े बड़े ओले पड़ रहे हैं तो कब्र में पड़े हुए मुर्दे को क्या खतरा है। मरे हुए को खतरा नहीं होता, जीवित मनुष्य को खतरा होता है। किसी के पास जिन्दगी साधारण मनुष्य से कुछ बड़ी होती है। कुछ धन संपदा ज्यादा होगी, कुछ प्रभुता ज्यादा होगी। आम व्यक्ति से शक्ति ज्यादा है तो खतरा भी ज्यादा है। कमजोर मनुष्य को खतरा नहीं क्योंकि कमजोर मनुष्य गुलाम होता है। जितना स्वतंत्र मनुष्य होगा, उतना ही गुलाम

होगा। जलते हुए दीपक को खतरा है, तूफानी हवाओं से बुझ सकता है, पर जो दीपक पहले ही बुझा हुआ है उसे क्या खतरा है। एक खिले हुए फूल को खतरा है। उसकी कोमलता, उसका सौंदर्य, उसकी महक से मोहित होकर कोई तोड़ सकता है।

संसार में कोई अवगुणों की इतनी विरोधता नहीं होती जितनी गुणों की होती है। कोई कठोरता की इतनी विरोधता नहीं होती जिनती दया की विरोधता होती है। गुण तो जलता हुआ दीपक है, खतरे में है। अवगुण तो बुझा हुआ दीपक है, है ही कुछ नहीं। फूल खतरे में है, मगर उसके साथ लगे हुए कांटों को कोई खतरा नहीं। अवतार पुरुष संतजन खतरे में होते हैं क्योंकि कोमलता है। पूरा जीवन संघर्ष में गुजरा श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी का। गर्म तवे पर बैठे हैं गुरु अर्जुन देव जी महाराज। ग्वालियर के किले में बंद हैं छठे गुरु हरगोबिन्द साहिब। गुरु नानक कभी बाबर की जेल में हैं, कभी गुलामों की मंडी में खड़े किए गए है, कहीं पत्थर मारे गए हैं, कहीं कुएं में फैंके गए हैं।

पंडित गुलाब सिंघ जी महाराज वाणी के टीकाकार हैं मगर लगभग सनातन मत के धर्म ग्रंथों के भी टीकाकार हैं। भावर सामरत में वह ऐसा कहते हैं–

जिह नाम उचारत दूख मिटे हउ राम गए पद सिउ बन माही।।

जिसका नाम लेते भक्तों को शांति मिलती है। राम कहते सकून मिलता है। इस मर्यादा–पुरुषोतम से जुड़ कर कईयों को आनंद मिलता है, पर वह रोते हुए बनवास जा रहे हैं।

रोवै रामु निकाला भइआ।। **(अंग ९५३)**

मथुरा कजि कान बणी अपदा मुचकंद हरी तिन की गिर माही।।

जैसे जरासंध, कंस का ससुर विशाल सेना लेकर मथुरा आया। श्री कृष्ण को मारने के लिए तो छोड़नी पड़ गई मथुरा। जरासंध का मुकाबला करना मुश्किल था। जैसे ही जरासंध को मालूम हुआ, उसने पीछा किया कृष्ण का। कृष्ण जी को अवसर मिल गया। इसी तरह घिरे थे आनंदपुर में 80 हजार का घेरा और अंदर गुरु गोबिन्द सिंघ। गोवर्धन पहाड़ के पास गुफा में बैठा था ऋषि मुचकंद और कृष्ण जी भाग कर उसके पीछे लेट गए कि दिखाई न दें। सेना गुजर गई। इस तरह बचे। पूरा दिन पीछे लेटे रहे।

बलबीर पिता रघुवीर पिता दुख लोग समान लहे भउ माही ।।
कहु रे मन कौण सुखी जग मे तन धार के जो दुख पावत नाही ।।

एक भी मनुष्य दिखा दो गुरु, पीर, पैगम्बर और साधारण संसारी लोग, मनुष्य तन प्राप्त हुआ हो और दुखी न हुआ हो। तन रोगों का स्त्रोत है। बुढ़ापे का रोग प्रगट होकर एक दिन तन को नाश करेगा। मन कलह का अखाड़ा है।

संत, अवतार, गुरु तन के तल पर नहीं जीते, मन के तल पर नहीं जीते। ये दोनों से ऊपर उठ जाते हैं। भक्त भी तन के कलह और मन के गुनाह परमात्मा के आगे रख देते हैं। इसको एक सूफी ख्यालों के मालिक जोश इस ढंग से बयान करते हैं।

ख़ुदा को सौंप दो हे जोश पिटारा गुनाहों को ।।

कहता है यह गुनाहों की गठरी उस खुदा के कदमों में रख दो। तुम्हारे गुनाह और किसी ने नहीं लेने सिवा खुदा के। तेरे गुनाहों की वजह से तुम्हें समाज सजा भी दे सकता है। मगर यह ऐसा भी है कि कितने गुनाह क्यों न हों, फिर भी तुम्हें गले लगा सकता है। गंदगी में लथपथ हुआ मासूम बच्चा, ममता की मारी मां उठा लेती है। इतना बोझ अपने सिर पर कब तक उठाओगे? फैंको दूर। कहाँ फैंकें? खुदा के कदमों में ही रख दे, वही तेरे गुनाह ले सकता है। उसके अलावा तुम्हारे गुनाहों को लेने वाला और कोई नहीं। इस तरह के महापुरुष पाप से, दुख से, संताप से ऊँचे जीते हैं। इसको श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी महाराज इस तरह बयान करते हैं-

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै ।।
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै ।। १ ।। रहाउ ।।
नह निंदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहु अभिमाना ।।
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना ।।

(अंग ६३३)

तन की खुशियों से, मन की प्रसन्नता से, तन के रोगों से, मन के शोकों से, मन की खूबियों से यह लोग ऊपर जी उठें। पर इनके तन और मन को संसार चोट क्यों पहुँचाता है? कोमलता है, सौंदर्य है, सुगंध है, गुण है।

बनारस के लोग, हरिद्वार के लोग गुरु नानक से तर्क करते हैं कि आप

परम्पराओं को तोड़ते क्यों हो? महाराज कहने लगे, मैं तोड़ता तो नहीं मगर मैं परम्पराओं के रास्ते पर चलता भी नहीं। क्यों नहीं चलते? मेरा रास्ता सत्य है, परम्परा नहीं। मेरी सच्चाई से कोई परम्परा मेल खा जाए, वह बात और है, मैं परम्परावादी नहीं, मैं सत्यवादी हूँ। अब परम्परावादी विरोध करेंगे। लोग तो परम्परा में जीते हैं, सच में नहीं जीते हैं। जब इतना विरोध होगा तो तन को चोट भी लग सकती है। मेरे ख्याल में जो बहुत पूजे जा रहे हैं, बड़े बड़े जलूस निकलते हैं, लोग जिनको सिरों पर उठा कर घूमते हैं, यह यकीन मानो, मुर्दों को ढो रहे हैं। इनके पास जिन्दगी कोई नहीं। यह परम्परावादी है जैसे संसार जी रहा है, उसी तरह ही जीते हैं। मगर जिस तरह की सच्चाई है उसी तरह करना है, यह गुरु नानक का दृष्टिकोण है।

संसार में एक दुख नहीं है। यह ऐसा सांप है जिसके हज़ार मुँह हैं। उसके एक मुँह से बचते हैं तो दूसरा मुँह आगे आ जाता है। पदार्थों का अपना रस है। यह रस इन्द्रियों का रस कहलाता है। ध्यान के ऊपर जीवन की शक्ति सवार हो जाए तो जो हमारे भीतर सुरति शक्ति है और यह जब ध्यान के ऊपर सवार होकर इन्द्रियों के रास्ते बाहर जाती है तो कुछ रस बनता है। बिखे-नाद का अपना रस है, अश्लील गीतों का अपना रस है। कोई कीर्तनीए इतने प्रसिद्ध नहीं हैं। जितने अश्लील गीत गाने वाले प्रसिद्ध हैं। निंदा स्तुति का रस बन जाता है। यह कान किसी की स्तुति भी सुनना चाहते हैं, किसी की निन्दा भी सुनना चाहते हैं। कथा-कीर्तन पर पांच-दस मिनट लेट हो जाएँ, व्यक्ति गुस्सा हो जाता है और किसी की निन्दा करने लगे, चाहे घंटों तक सुन लें। शक्ति ध्यान पर सवार हो कर जब जुबान के रास्ते बाहर जाती है तो भोजन का रस बनता है, पदार्थों का रस बनता है। नासिका के रास्ते जब बाहर जाती है गंध तो सुगंध का रस बनता है। संसार में कोई रूप का अंत है, नाद का अंत है, सुगंन्ध का अंत है, कोई स्पर्शता का अंत है। बेशुमार है, यह तो खीर का सागर है। पर भोगें तो रोगी। सीमा से ज्यादा इन्द्रियों का यह रस अगर कोई भोगेगा तो रोगी हो जाएगा। फिर क्या करें? मगर निन्दा भी नहीं। कारण? यह संसार निरंकार की छाया है। धूप के सताए हुए मनुष्य को छाया में आराम मिलता है। मगर थोड़ा आराम मिल गया है, पेट की भूख नहीं मिटेगी इस छाया के साथ। पेड़ पर जो ऊँचे ऊँचे फल लगे हैं, उठना पड़ेगा, हाथ ऊँचा करना पड़ेगा, फल तोड़ना पड़ेगा, फिर खाने से कहीं भूख मिटेगी, वैसे नहीं। आराम धन पदार्थों

से मिल जाता है, इन्द्रियों के रस भी थोड़ी छाया हैं।

पेड़ों से कई फल स्वयं जमीन पर गिरते हैं पर प्रभु के नाम का फल स्वयं मुँह में नहीं पड़ता, जपना पड़ता है। जो वस्तु बिना परिश्रम के मिल जाए और जल्दी मिल जाए तो मनुष्य कद्र नहीं करता। इसलिए सबसे कठिन है।

आखणि अउखा साचा नाउ॥ (अंग ३४९)

बहुत कठिन है। यह तो जपना पड़ेगा, यह तो साधना करनी पड़ेगी। क्योंकि साधना कारण यह सांप तो सवार हो ही गया है, लेट गया है। उसका मुँह भी नीचे हो गया है, पदार्थ भी नीचे, यह संसार से ऊँची सुरति वाले मनुष्य की मनोवृत्ति होती है। यह संसार के तल पर नहीं जीता, निरंकार के तल पर जीता है। यह इन्द्रियों के रस के तल पर नहीं जीता, यह इन्द्रियों को जीत कर आत्म रस के तल पर जीता है। जो इन्द्रियों के रस पर जी रहा है, इन्द्र है। हर व्यक्ति इन्द्र है। कोई जुबान के रस में फँसा हुआ है, कोई आँखों के रस में, कोई कानों, चमड़ी, नासिका के रस में। यह रस भी प्रभु ने आप डाला है।

मनुष्य के भीतर यह पांच बड़े प्रधान रस हैं, मगर ऐसे जीव प्रभु ने बनाए हैं कि एक एक रस उनके भीतर प्रधान है-

म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंचर एक दोख बिनास॥
पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस॥

(अंग ४८६)

आँखों का रस पतंगे के पास है, ज़ुबान का रस मीन के पास है। कहते हैं मछली ज़ुबान का रस मान लेती है, मनुष्य नहीं मान सकता। उसकी पूरी शक्ति ज़ुबान पर है। कानों का रस मृग के पास प्रधान हैं। नासिका का रस भंवरे के पास प्रधान है। काम का रस हाथी के पास प्रधान है। मनुष्य इन्द्र है। परमात्मा उसको मिलता है जो इन्द्रजीत हो, इन्द्रियों को जीत ले। ऊँचा उठ जाए। कैसे ऊँचा उठे? जैसे ही नाम जपता है और ध्यान के ऊपर मनुष्य की शक्ति नाम की तरफ जाती है। ऊँचाइयों को छूती है, इन्द्रियों का रस नीचे रह जाता है। नीचे की तरफ शक्ति का जाना स्वाभाविक है, ध्यान का जाना भी स्वाभाविक है। पानी जैसे नीचे की तरफ स्वयं जाता है, बुलंदियों पर चढ़ाना हो तो प्रैशर देना पड़ता है।

मनुष्य की जीवन शक्ति के लिए तो ध्यान गुरुवाणी जपनी पड़ती है, कथा कीर्तन सुनना पड़ता है, सत्संग करना पड़ता है तो इसकी शक्ति ऊर्धगमन होती है। मगर निम्नता में भी उस परिपूर्ण परमात्मा ने रस बना रखा है। इन्द्रियों का रस क्योंकि माया भी उसकी छाया है। माया छाया है तो छाया जमीन पर है। मनुष्य की जिन्दगी जमीन से ऊँची नहीं उठती। इसलिए मायाधारी की कोई उपमा नहीं है। मायाधारी से अभिप्राय इन्द्रियों के रस में जीने वाला। धनाढ्य मनुष्य मायाधारी नहीं।

कबीर इसी शब्द में कहते हैं कि अछूता कोई भी नहीं है इस नागिन से। सभी को छुआ है इसने। सभी को नीचे फैंका है इसने, बैठा रह इस छांव में। फल की तरफ देखने ही नहीं देती। जब हम किसी के पांव को देखें तो उसका मुख नहीं देख सकते। नज़रों में इतनी शक्ति नहीं कि वह एक ही समय पांव को भी देख सकें और मुख को भी देखें। इन्द्रियों के रस से ऊँचे उठे बिना नाम रस नहीं है। नाम रस वाला मनुष्य छाया से ऊपर उठ जाता है। छाया नीचे रह जाती है। इस पावन पवित्र वाक्य में भक्त सिरमौर कबीर हैं। जिस ढंग से उन्होंने बयान किया है। आप श्रवण करें।

आसा इकतुके ४।। सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ।।

इस माया नागिन के ऊपर और कोई बलवान नहीं, यह सभी से ज्यादा बलवान है। सभी इससे नीचे है।

जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ।। १।।

यह साधारण सत्संगियों की बात नहीं, साधारण अभ्यासियों की बात नहीं, इस नागिन ने विष्णु को डस लिया, इस नागिन ने महादेव को छल लिया, इस नागिन ने ब्रह्मा को छल लिया। विष्णु जैसा सतोगुणी और महान ज्ञानी, शिव जी जैसा तपस्वी, जपीश्वर और बैरागी, ब्रह्मा जैसा विद्वान तीनों को इस नागिन ने डसा है। अगर अमृत की बात बयान करनी है तो साथ जहर के दुख भी बयान करने पड़ते हैं। उस चोटी तक पहुँचना है तो व्याख्या गहराइयों की भी करनी पड़ती है। मनुष्य चार फुट की ऊँचाई से गिरा है, कोई चोट नहीं लगेगी। दस फुट की ऊँचाई से गिरा है, जरा सी चोट लग सकती है। बीस पच्चीस फुट की ऊँचाई से गिरा है, हड्डीयाँ टूट सकती हैं। हजार फुट की ऊँचाई से

गिरा है, टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा। छोटे मनुष्य जो अभी दो-चार फुट ही चढ़े हैं, इनसे गलतियाँ भी छोटी होंगी। जो हजार फुट से गिरेगा, इतनी बुलंदियों पर चढ़ा है, इस मनुष्य से जब अनर्थ भी होगा तो बहुत बड़ा होगा। छोटे मनुष्य की गलती कोई बहुत बड़ा नुक्सान नहीं करती, बड़े मनुष्य की जरा सी गलती भी तबाहियों को जन्म देती है।

ब्रह्मा जैसा विद्वान मनुष्य अगर गिरेगा तो खाई में गिरेगा, चूर चूर होगा। यह गिरा भी है। रूप की व्याख्या कर रहा था कि रूप कैसे उत्तेजना पैदा कर सकता है और मनुष्य के सिमरन में कैसे कैसे रूकावट डाल सकता है, यह महानता बता रहा था। सामने बैठी थी ब्रह्मा की पुत्री सरस्वती, अपनी बेटी को देखकर ही अपना मन मैला कर बैठा। जब उसने महसूस किया तों वह उठ कर पीछे बैठ गई। वह पीछे देखने लगा। वह दाएं तरफ बैठ गई, वह दाएं तरफ देखने लग पड़ा। फिर वह बाईं तरफ बैठ गई। वह बार-बार बाईं तरफ देखने लग पड़ा। कबीर कहते हैं, इतनी बलवान है यह माया कि कहीं लोभ के रूप में, कहीं काम के रूप में, कहीं अहंकार के रूप में।

मारु मारु स्त्रपनी निरमल जलि पैठी॥

यह जो नागिन है, मार-मार कर जगत् को निर्मल जल में भी आ गई। सत्संग में भी आ गई। यह सत्संगियों के मन को भी मैला करती है। आए गुरुद्वारे होते हैं मगर कहीं लोभ, कहीं छीना-झपटी, कहीं काम कारण नज़रें मैली।

जिनि त्रिभवणु डसीअले गुर प्रसादि डीठी॥ १॥ रहाउ॥

जिसने तीन भवनों के लोगों को डंक मारा है। गुरु की कृपा द्वारा मैं बच गया, मुझे सच्चाई का पता चल गया। यह छाया है आराम करने के लिए, तृप्ति इससे नहीं, तृप्ति तो फल खाने में है। हाथ ऊँचे करने पड़ेंगे, पेड़ से फल तोड़ना पड़ेगा। इस छाया के साथ व्यक्तिगत तौर पर आराम है। यह व्यक्तिगत रस है जो रूकावट पैदा कर देते हैं। गुरु की कृपा से मुझे इस सच्चाई का पता चल गया है।

स्त्रपनी स्त्रपनी किआ कहहु भाई॥

अब कबीर कहते हैं कि नागिन-नागिन कह रहे हो क्या यह सभी को काट लेती है?

जिनि साचु पछानिआ तिनि स्त्रपनी खाई॥ २॥

जो सच को समझ जाता है, नागिन ने उसको क्या खाना है, वह नागिन को खा जाता है। वह नागिन को खत्म कर देता है।

स्त्रपनी ते आन छूछ नही अवरा॥

यह ठीक है कि इस नागिन से अछूता कोई नहीं, सभी को छूती है। सभी को डंक मारती है। परमात्मा तक पहुँचने के लिए यह नागिन रूकावट है। लोभ है, काम है, अहंकार है, इसने नहीं पहुँचने दिया। पदार्थ तो जरूरत थी, मगर इसका लोभ रोक कर रख देता है। काम परिवार की सीमा तक था, पर असंयम काम दुराचारी बना देता है। धन के लोभ ने बेईमान बना दिया है। अहंकार ने हिंसक बना दिया है। नागिन ने डंक मारा है।

स्त्रपनी जीती कहा करै जमरा॥ ३॥

इस नागिन से बचा कोई भी नहीं, सभी को इसने डंक मारा है।

इह स्त्रपनी ता की कीती होई॥

यह नागिन उसी परमात्मा की रचना है, उसी की बनाई हुई है।

बलु अबलु किआ इस ते होई॥ ४॥

यह बलवान है, यह निर्बल है, इसकी बात नहीं, इसके पास भी जो कुछ है, यह परमात्मा का है। छाया परमात्मा की है। परमात्मा बहुत महान है, उसकी छाया भी महान है। इतनी बात समझ आ जाए तो माया का रस नाम के रस से बेरस नहीं करता।

इह बसती ता बसत सरीरा॥

अगर हृदय में यही नागिन बसी हुई हो तो यह जन्म बना रहेगा, शरीर बना रहेगा, बार-बार मनुष्य जन्म लेता रहेगा। जितने समय तक माया की पकड़ मन में है, मन इस तन को धारण करता रहेगा।

गुर प्रसादि सहजि तरे कबीरा॥ ५॥ ६॥ १९॥

मगर भक्त कबीर जी कहते हैं कि गुरु की कृपा द्वारा मैं भव-सागर से

पार हो गया, मैं इससे बच गया। मैं इस को समझ गया हूँ जिसने मर्यादा बनाई है यह जन्म और मरण की, हमें समझ आ गई है। इस माया के कारण हम उस हुक्मी में लीन हो गए हैं। उपयोग करते हैं, जरूरते हैं, संसार के सुख लेते हैं, लोभ नहीं है। संयम में रहते हैं, असीम वासना नहीं है। आत्म-सम्मान में रहते हैं, अहंकार में नहीं। हमें समझ आ गई है, इसलिए हमारे मन में से यह निकल गई है। साहिब रहमत करें भूल-चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा।। वाहिगुरु जी की फतह।।

जितु कीता पाईऐ आपणा

सलोकु महला २॥

एह किनेही आसकी दूजै लगै जाइ॥
नानक आसकु कांढीऐ सद ही रहै समाइ॥
चंगै चंगा करि मंने मंदै मंदा होइ॥
आसकु एहु न आखीऐ जि लेखै वरतै सोइ॥१॥
महला २॥ सलामु जबाबु दोवै करे मुंढहु घुथा जाइ॥
नानक दोवै कूड़ीआ थाइ न काई पाइ॥२॥
पउड़ी॥ जितु सेविऐ सुखु पाईऐ सो साहिबु सदा सम्हालीऐ॥
जितु कीता पाईऐ आपणा सा घाल बुरी किउ घालीऐ॥
मंदा मूलि न कीचई दे लंमी नदरि निहालीऐ॥
जिउ साहिब नालि न हारीऐ तेवेहा पासा ढालीऐ॥
किछु लाहे उपरि घालीऐ॥२१॥

(अंग ४७४)

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी! प्रकृति में लगभग सभी अवतार पुरुषों ने, विद्वानों ने ऐसा कहा है कि मनुष्य महान है। प्रकृति में इसकी बराबरी का और कोई नहीं। इस मनुष्य को शरीर के सभी अंग परमात्मा ने बड़े बेशकीमती दिए हैं, पर दो वस्तुएँ अद्वितीय हैं, महान हैं- बुद्धि और हृदय, अक्ल और दिल। बुद्धि दी है परमात्मा ने समझने के लिए। वस्तु को समझना, संबंधों को समझना। यदि बुद्धि काम नहीं करती तो फिर मनुष्य को किसी पदार्थ का, व्यक्ति का पता नहीं चलेगा। यह पिता है, यह मां है, यह भाई है, यह मित्र है, यह पुत्र है, यह पत्नी है, यह बेटी है। इन सारे संबंधों की समझ हमें बुद्धि द्वारा

मिलती है। परमात्मा ने हृदय दिया है संबंधों से जुड़ने के लिए। बुद्धि में समझ है, हृदय में प्रीत है। कोई बुद्धि समझ से खाली नहीं और कोई हृदय प्रीत से भी खाली नहीं। जैसे हमारे हाथ में टार्च हो रात के समय और टार्च का मुख हम जिस तरफ करते हैं उसी तरफ की वस्तुएँ दिखाई देती हैं दूसरी तरफ नहीं। समझ जिस तरफ जाती है उसकी ही समझ पड़ती है, दूसरे की नहीं। बुद्धि की समर्था जिस तरफ होती है उसकी समझ देती है दूसरे की नहीं। मनुष्य को बुद्धि से खाली कर दें, हृदय से खाली कर दें, न किसी को समझ सकेगा न किसी से जुड़ सकेगा।

यह दो महान वस्तुएँ प्रभु ने मनुष्य को दी हैं। हाथ भी महान हैं, पांव भी महान हैं, आँखें भी महान हैं, मगर बुद्धि की अपनी बात है। इसी बुनियाद पर गुरुवाणी कह देती है–

इसु धरती महि तेरी सिकदारी॥ (अंग ३७४)

तू सिकदार है, तुझे समझ है। इसलिए आखिरी मुगल बादशाह बहादुर शाह ज़फर कहता है–

बनाया है ज़फर ख़ालिक ने कब इन्सां से बड़ कर।

खुदा ने भी मनुष्य से ऊँचा कहाँ बनाया है? बस मनुष्य तक उसने उच्चता रखी इस धरती पर।

सब कुछ मनुष्य से नीचे है। मनुष्य सबसे महान है, ऊँचा है। बुद्धि की दिशा जिस तरफ होगी उसी के साथ संबंध जोड़ेगी। देखने में आया है कि चार पांच बच्चे हैं व्यक्ति के, एक से ज्यादा प्यार है। बुद्धि की दिशा उस बच्चे की तरफ है। औरों से भी प्यार है, मगर इतना नहीं। यदि बुद्धि को समझने में गलती हो गई तो हृदय संबंध जोड़ने में भी गलती करेगा। जब कोई मनुष्य अपनी समझ को पदार्थ तक ही रोक लेता है तो हृदय में प्रीत भी पदार्थ तक ही रूक जाती है। ऐसे मनुष्य का दुनिया में परमात्मा नहीं होता, क्योंकि उस तरफ बुद्धि की दिशा ही नहीं। जब बुद्धि इस शारीरिक जीवन को ही महान समझ लेती है तो फिर परम जीवन से वंचित रह जाती है। फिर प्रीत भी इसी जीवन से है। प्रीत भी वहाँ रूक जाती है जहाँ समझ रूक जाती है। ऐसे कह लो जैसे मनुष्य ने गाड़ियाँ बनाई हैं, उनके साथ ब्रेक भी बनाई हैं। इस तरह मनुष्य समझ को

भी ब्रेक लगा सकता है। पदार्थ बुद्धि ने ऐसा महान मान लिया है कि प्रीत वहीं ही रुक गई। परिवार को बुद्धि ने इतनी महानता दे दी है कि प्रीत भी वहाँ रुक गई है। धन को बुद्धि ने इतनी अहमियत दे दी है कि प्रीत भी वहाँ रुक गई। मैंने दायां कदम रोक दिया, बायां अपने आप ही रुक जाएगा। एक के रुकते दूसरा नहीं रुक सकता।

अगर गुलाब के बीज हैं तो सभी बीजों में गुलाब हैं। आम की गुठलियाँ हैं, बीज हैं, तो इन गुठलियों में आम हैं। ऐसे नहीं कह सकते हैं कि एक बीज में फल है, दूसरे में नहीं है। एक बीज में फल प्रगट हो गया, दूसरे में नहीं प्रगट हुआ क्योंकि बोया नहीं।

बुद्धि प्रभु ने सभी को दी है। उसमें समझ भी परमात्मा ने सभी को दी है। कोई बीज फल और पत्तों से खाली नहीं है। यह अलग बात है कि बीज से पौधा अंकुरित नहीं हो सका, न फूल निकल सके, न फल क्योंकि अनुकूल धरती न मिली, वातावरण न मिला, ऋतु न मिली। हर बुद्धि, हर हृदय इतना महान हो सकता है कि उस बुद्धि को, उस हृदय को कह सकते हैं कि यह तो परमात्मा है। जो जो मनुष्य परमात्मा की प्रीत से वंचित रह गया है, परम रस से वंचित रह गया है तो एक बात स्पष्ट है कि उसकी बुद्धि, उसकी प्रीत इन्द्रियों के रस पर रुक गई है।

मनुष्य की बुद्धि आगे चल सके और प्रीत भी गमन कर सके, यह सत्संग है। सत्संग का अर्थ क्या है? मनुष्य सत्य से, चेतना से, आनंद से सम्बन्ध जोड़ सके। मनुष्य की बुद्धि अकेली असत्य पर न रुके, सत्य पर रुके। और सत्य पर रुक ही जाएगी, आगे रास्ता ही नहीं मिलना, हैरान हो जाएगी। अगर बुद्धि रुकी हुई है पदार्थों पर, न यह सत्य हो सकेगा, न यह चित हो सकेगा, न यह आनंद हो सकेगा। यहाँ मनुष्य की बुद्धि को धक्का दिया जाता है गुरु के शब्दों के द्वारा, कीर्तन के रूप में, कथा के रूप में, पाठ के रूप में, चल आगे कहाँ रुक गई है।

इकबाल कहता है कि ऐ अक्ल, तू रुकती है तो रुक, यदि तू आगे नहीं जाना चाहती तो जहाँ मैं संसार को छोड़ रहा हूँ, मैं अक्ल तुझे भी छोड़ दूंगा।

तेरे सीने में दम हैं दिल नहीं है।
तेरा दम गर्म यह महिफल नहीं है।

निकल जा अक्ल से आगे कि यह
नूरे चिराग़े राह है मंज़िल नहीं है।

बुद्धि प्रभु ने दी है। उसकी दी हुई बुद्धि उस तक पहुँचने के लिए नहीं, उसको समझने के लिए है। हे प्रभु! विवेकशील बुद्धि का भाव है कि बुद्धि तुझ तक पहुँचे। जिस तक पहुँच गई है, मैं नहीं पहुँचा। मुझे हिमालय की समझ तो आ गई है, पर मेरे पैर अभी हिमालय तक नहीं पहुँचे। मुझे सोने की समझ तो आ गई पर सोना मुझे अभी मिला नहीं है। समझ आ गई परमात्मा की कि हृदय तो परमात्मा से खाली है। अब समझ को दूर फैंकों, अब प्रीत को चलाओ। अक्ल का बस इतना ही प्रयोग था। किश्ती का बस इतना ही प्रयोग था कि उसमें बैठे और दरिया के दूसरे किनारे पर पहुँच गए। बस इतना ही। अगर किश्ती को सिर पर उठा लिया, किश्ती का यह पार करना भी नरक बन जाएगा। अक्ल पर सवार हो कर तू समझ पर अक्ल अपने ऊपर हावी न होने दे। कबीर ने इसको इस तरह बयान किया है–

कहु कबीर परगटु भई खेड॥ लेले कउ चूघै नित भेड॥

(अंग ३२६)

मनुष्य की रुकावट का एक और कारण बताया है। मनुष्य अपनी ही बनाई हुई वस्तुओं में फँस गया है और प्रभु की बनाई हुई वस्तुओं से इसका संबंध टूट गया है। जो कुछ उसने बनाया है, उसमें फिर विकास नहीं, वहीं रुका हुआ है, सड़क है, मकान है, वस्तुएँ हैं। प्रभु ने दरिया बनाए, जंगल बनाए, पहाड़ बनाए, मनुष्य का संबंध टूट गया। लाखों बच्चों ने कभी खेत नहीं देखे, उगती हुई गेहूँ नहीं देखी, पौधे नहीं देखे, जिनको फूल फल लगते हैं।

एक चोटी का विद्वान हो सकता है प्रीत से खाली हो। एक चोटी के वैज्ञानिक के बारे में मैंने पढ़ा। तीन उसके बच्चे थे। तीनों बच्चों के उसको नाम भी न आएँ। जब उससे पूछा गया तो कहने लगा कई दिनों से मैं अपनी खोज में मगन हूँ, मुझे बच्चों की शक्ल भी नहीं याद। संबंध जोड़ने के लिए प्रीत चाहिए। संबंध को समझने के लिए बुद्धि चाहिए। हर एक मनुष्य का हर वस्तु से संबंध है। ननिहाल, ददिहाल, ससुराल हो सकते हैं। मगर संबंध तो उसी से होगा जिसके साथ प्रीत है। बुद्धि तो सभी तक पहुँच गई है कि यह नानी है, यह दादा है, यह ससुर है मगर रिश्ता उससे जुड़ेगा जिस से प्रीत है। निरंकार को बुद्धि समझना

नहीं चाहती, प्रीत भी कोई नहीं, संबंध भी नहीं जुड़ता।

इस तरह की आशिकी का जिक्र किया है श्री गुरु अंगद देव जी महाराज ने। यह आसा दी वार के श्लोक है, आज का जो हुक्मनामा है। फ़ारसी का शब्द आशिकी, उर्दू में कहते हैं प्यार, हिन्दी में कहते हैं प्रेम, प्रीत। यदि खाली हृदय होगा तो उसका किसी से संबंध नहीं होगा। जिस से भी उसका संबंध है, ठीक है घर में माता पिता से संबंध नहीं होगा तो पत्नी से होगा। चलो पत्नी से इतना संबंध नहीं होगा, तो पुत्रों से होगा। चलो फिर पुत्रों से नहीं तो फिर धन संपदा से होगा। कई दफा धन से इतना प्यार कि पुत्र त्यागे जा सकते हैं, परिवार त्यागा जा सकता है।

राज सिंहासन से इतना प्यार, जहांगीर ने तो खुसरो को मरवा दिया था। औरंगजेब ने अपने पिता को तड़पा तड़पा कर जेल में मारा है। राज-सिंहासन चाहिए, यह पिता नहीं चाहिए। प्रीत राज-सिंहासन तक पहुँची है और समझ भी राज-सिंहासन से प्रभावित है। बुद्धि जहाँ रुक जाती है, बुद्धि जिसे महान समझ लेती है, इस से अब आगे जाने की आवश्यकता नहीं। यह काफी है, प्रीत भी वहाँ रुक जाती है।

लगभग मनुष्य ने गलत जगह पर बुद्धि को ब्रेक लगाई है जिस वजह से प्रीत रुकी हुई है। जहाँ रोकना नहीं चाहिए था, मनुष्य ने अपनी बुद्धि को वहाँ रोक दिया है। स्कूल हैं, महाविद्यालय हैं, विश्वविद्यालय हैं, इसकी बुद्धि को विकसित करने के सारे साधन हैं पर पदार्थ तक, इससे आगे नहीं। इसलिए किसी एक भी विश्वविद्यालय ने संत नहीं पैदा किए। किसी एक स्कूल, कॉलेज ने भक्त पैदा नहीं किए पर इसका यह अर्थ मत समझना कि पदार्थों को समझना नहीं है। यह पानी गंदा है, यह निर्मल है। इसलिए पानी को मनुष्य को फिल्टर करना पड़ा। फिल्टर करने के हजारों तौर-तरीके हैं। छानकर पानी पीना है, उबाल कर पानी पीना है ताकि शरीर रोगी न हो। शुद्ध विचार तेरे अन्दर जाने चाहिए जिससे कि तेरा मन रोगी न हो। विचार जो बुरे-बुरे आते हैं, सारे अंदर डाले जाते हैं। इसलिए पूरी दुनिया में शारीरिक रोग किसी हद तक थोड़े कम होते जा रहे हैं और मानसिक रोग दुनिया में बढ़ते जा रहे हैं। भोजन स्वच्छ खाना है जिससे कि शरीर रोगी न हो। फिर बुरा देखना भी नहीं है, बुरा सुनना भी नहीं है, बुरे विचार भी नहीं चाहिए, इन्हें भी शुद्ध कर। यह सत्संग हमें शुद्ध करना सिखाता है। यह सुनना है और यह नहीं सुनना। यह बोलना है, यह

नहीं बोलना। यह सोचना है, यह नहीं सोचना। यह नहीं याद करना है, यह नहीं याद करना।

हे मेरे प्रभु! मैं यह लिखे गीत नहीं सुनना चाहता।

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई॥
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरि हरि निहालिआ॥

(अंग ९२२)

एक सुन्दर स्वरूप दिखाई दिया है, वासना जागी है पर इस स्वरूप को भी फिल्टर किया जा सकता है। आप कहोगे सुन्दर स्वरूप को कैसे फिल्टर करें ताकि इसे देखकर अंदर वासना न जागे? पुरुष स्वरूप से प्रभावित होता है, स्त्री शक्ति से प्रभावित होती है। पुरुष के पास ताकत कितनी है? इसके पास धन संपदा कितनी है? पुरुष देखता है, इसके पास सौन्दर्य कितना है? देखने के अलग अलग ढ़ंग हैं।

चांदनी चौक में बहादुर शाह ज़फर के दरबार की नर्तकी रथ पर बैठकर गुजर रही थी। रथ के आगे जो दो घोड़े लगे हुए थे, बहुत सुन्दर और सजाए हुए थे। रथ भी बहुत सजाया हुआ और कीमती था। रथ के ऊपर जो नर्तकी बैठी थी, उसने अपना तन भी बहुत सवारा हुआ था। यह नर्तकी कवयित्री भी थी, विद्वान भी थी, साहित्यकार भी थी। चौक में खड़े समय के महान दार्शनिक आलिम ग़ालिब, घोड़ों को देखते हैं, रथ को देखते हैं, ऊपर बैठी नर्तकी को देखते हैं। नज़रें घोड़े से, रथ से एक तरफ हुई और नर्तकी पर टिक गईं। रथ रुकवा दिया नर्तकी ने, क्योंकि उसको भी पता था यह शायर-ए-आज़म ग़ालिब है। यह मामूली सोच का मनुष्य नहीं है। इसको बोल कर कुछ समझाने की आवश्यकता नहीं है, यह तो इशारों से भी समझ जाता है। शेख सायदी कहते हैं कि जो इशारों को समझता है वह देवता है। जो कहने से समझता है, वह मनुष्य है। जो कहने से भी नहीं समझता, वह पशु है। यह मनुष्य नहीं, यह फरिश्ता है। पता था ग़ालिब को यह साहित्यकार है, केवल नृत्य नहीं करती, बल्कि इतनी समझदार है कि अनेकों को नचाती है। कलम की धनी है, दिमाग की धनी है। नर्तकी को भी पता था यह शायर-ए-आज़म है, पर नर्तकी एक कटाक्ष करती है ग़ालिब पर। ग़ालिब की नज़रें पहले घोड़ों को देखती हैं, दोनों

घोड़े बड़े खूबसूरत हैं। फिर रथ को देखती हैं नज़रें। न घोड़ों पर नज़रें टिकीं, न रथ पर नज़रें टिकीं, टिक गईं नर्तकी पर। उस समय की भाषा उर्दू और उर्दू का ही शायर ग़ालिब और नर्तकी भी उर्दू की कवयित्री। उसने कविता के जरिए एक ताना मारा ग़ालिब को। इतना बोल कर उसने सोए शेर का जगा दिया। आगे वह भी मामूली मनुष्य नहीं था।

ग़रज़ है तुझ से न सूरत से तेरी मुस्सवर की हम तो कलम देखते हैं।

कौन देख रहा है तुझे, मैं तो उस चित्रकार की कलम देख रहा हूँ। जिसने इतने सुन्दर-सुन्दर रंग भर कर यह तस्वीर बनाई है। तुझे नहीं देख रहा। तुझे देख कर खुदा याद आ गया। तस्वीर को देखते चित्रकार याद आ गया। भक्त कबीर ने यह ख्याल बावन अखरी में दिया है-

चचा रचित चित्र है भारी॥

बड़ा विशाल चित्र रचा है उस चित्रकार ने।

चचा रचित चित्र है भारी॥
तजि चित्रै चेतहु चितकारी॥
चित्र बचित्र इहै अवझेरा॥
तजि चित्रै चितु राखि चितेरा॥

(अंग ३४०)

चित्र पर समझ रुक गई है तो प्रीत भी रुक गई है। समझ आगे चली गई चित्रकार तक जहाँ से यह रंग-रूप निकले हैं। जिससे इतनी सुन्दर सुन्दर तस्वीरें निकली हैं, वह आप कितना सुन्दर होगा। समझ आगे चली गई तो प्रीत भी आगे जाएगी। प्रीत प्रभु तक पहुँचे, इसलिए सत्संग है, कथा है, कीर्तन है। महाराज कहते हैं कि जिसको हम प्रीत कहते हैं, गुरु से प्रीत है, यह तो बड़ा प्रेमी है, यह तो प्रेम से कीर्तन करता है, मैंने तो देखा अहंकार से कीर्तन करता है। प्रेम तो मनुष्य को परमात्मा जैसे बना देता है।

लैला से प्रीत थी मजनू को तो चारों तरफ लैला ही लैला दिखाई देने लगी। ऐसी हालत हुई कि अपना आप भी लैला दिखाई देने लगा। परमात्मा से जिस दिन प्रीत होगी, ऐसा कुछ भी नहीं होगा कि परमात्मा न दिखाई दे।

सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंदु बिनु नही कोई।।

(अंग ४८५)

आप आखिरी अर्थ श्रवण करें।

सलोकु महला २।।

एह किनेही आसकी दूजै लगै जाइ।।

यह कैसी आशिकी है, यह किसका प्रेम है। प्रेम जिससे हो, प्रेम टिक जाता है। प्रेम ही हृदय को टिकाता है। बिना प्रीत से टिकाव होता ही नहीं। कई दफा जिनको गुरु से किंचित मात्र भी प्रीत न हो, उनके लिए एक मिनट भी गुरुद्वारे में बैठना कठिन है।

जिन के चित कठोर हहि से बहहि न सतिगुर पासि।।

(अंग ३१४)

वह तो बहुत मुश्किल से समय काटते हैं। उनकी अक्ल वहाँ भटकती है क्योंकि प्रीत नहीं है। महाराज कहते हैं, यह कैसा प्रेम है? क्योंकि यह तो अभी भी भटक रहा है। यह प्रेम नहीं है। यहाँ आशिकी होती है वहाँ टिकाव होता है। ज्ञान है, और बहुत से गुण हैं, टिकाव नहीं होगा। प्रेम के बिना टिकाव नहीं होगा। जिस दिन प्रीत पैदा हो गई फिर टिक जाएगा।

नानक आसकु कांढीऐ सद ही रहै समाइ।।

उसको प्रेमी कहते हैं जो सदा टिका रहता है, समाया रहता है, लीन रहता है, उसके बिना किसी और तरफ भटकना नहीं होती।

चंगै चंगा करि मंने मंदै मंदा होइ।।

यह कोई आशिक की बात है। लाभ मिल गया तो कहता है कि परमात्मा! बहुत अच्छा किया है, तेरी बहुत कृपा है। तेरा शुक्राना है। कहीं नुक्सान हो गया है, दीवालिया हो गया है तो कहता है प्रभु! यह क्या कर दिया तूने। इसका भाव प्रभु को तूने अक्ल देनी है। अपने अनुकूल कुछ हो जाए तो प्रभु तू बहुत अच्छा है, मगर प्रतिकूल हो गया तो प्रभु यह तूने क्या कर दिया। अगर प्रतिकूल हो गया, उस समय भी परमात्मा अच्छा लगे। फिर यह सच्चा आशिक है नहीं तो नितनेमी हो सकता है, प्रेमी नहीं। हम नितनेमियों को प्रेमी कहते रहे हैं।

प्रेमी, इज्जत हो गई ठीक, बेइज्जती हो गई तो भी ठीक। प्रभु तुम्हारे हाथों से जो भी आया है हमें कबूल है। शिकायत मनुष्य को दूर कर देती हैं, शुक्राने नजदीक ले आते हैं।

आसकु एहु न आखीऐ जि लेखै वरतै सोइ॥ १॥

इस तरह की माप-तोल में रहते हैं ऐसे। महाराज कहते हैं, यह आशिक नहीं हैं, यह प्रेमी नहीं हैं। इन्होंने सच्चाई को नहीं समझा।

महला २॥ सलामु जबाबु दोवै करे मुंढहु घुथा जाइ॥

सिर भी झुकाता है, मगर अन्य यह कह दे कि यह जरा काम करना है तो इन्कार भी करता है। ऐसे मनुष्य का झुकना पाखण्ड है। झुक तो रहा है, पर गुरु की कोई बात मानने को तैयार नहीं।

नानक दोवै कूड़ीआ थाइ न काई पाइ॥ २॥

ऐसे मनुष्य का क्योंकि इन्कार करना जहाँ झूठा है, वहाँ ऐसे मनुष्य का सलाम करना भी झूठा है। यह दोनों झूठे हैं, इसलिए इसको प्रभु की दरगाह में जगह प्राप्त नहीं होगी।

पउड़ी॥ जितु सेविऐ सुखु पाईऐ सो साहिबु सदा सम्हालीऐ॥

जिसकी सेवा सदैव सुख प्रदान करती है फिर उसी साहिब की संभाल करनी चाहिए, उसकी समझ और उसी से प्रीत।

जितु कीता पाईऐ आपणा सा घाल बुरी किउ घालीऐ॥

जब मैंने अपना बीजा हुआ अपने आप ही खाना है तो फिर इसका फल भी गलत है। मेरा कर्म किसी को चोट पहुँचा रहा है तो यह कर्म मुझे चोट पहुँचाएगा।

मंदा मूलि न कीचई दे लंमी नदरि निहालीऐ॥

गलती से भी बुरा नहीं करना, निगाह लम्बी रखनी है। बीज को बो रहा है सिर्फ बीज दिखाई दे रहा है। यह छोटी निगाह है, पर बीज के बीच फल दिखाई दे रहा है, बहुत कृपा है। इसलिए महाराज कहते हैं कि सिर्फ कर्म को न देख,

जो तू कर रहा है, उसके फल को भी देख ताकि भूल कर भी तू बुरा न करे।

जिउ साहिब नालि न हारीऐ तेवेहा पासा ढालीऐ॥

इस तरह का खेल खेलना चाहिए कि सच के मार्ग पर, प्रभु के मार्ग पर हार न हो जाए।

किछु लाहे उपरि घालीऐ॥ २१॥

आवश्य परिश्रम ऐसा करना चाहिए जिससे लाभ प्राप्त हो। साहिब रहमत करें। भूल चूक की माफी॥

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

कहतु कबीरु कोई नही तेरा

सोरठि ੧ਓ सतिगुरु प्रसादि॥

बहु परपंच करि पर धनु लिआवै॥
सुत दारा पहि आनि लुटावै॥१॥
मन मेरे भूले कपटु न कीजै॥
अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै॥ १॥ रहाउ॥
छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै॥
तब तेरी ओक कोई पानीओ न पावै॥२॥
कहतु कबीरु कोई नही तेरा॥
हिरदै रामु की न जपहि सवेरा॥३॥९॥

(अंग ६५६)

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी! कबीर के साथ एक नई श्रृंखला आरंभ हुई भक्तों की। कबीर सिरमौर है। कबीर कारण उन लोगों को बड़ी प्रेरणा मिली, जिनके लिए मंदिरों के दरवाजे बंद थे। ऐसे कह लो, कबीर भक्ति लहर के जन्म दाता थे। इन सबके लिए मंदिरों के दरवाजे बंद थे, मगर कबीर ने ऐलान किया कि हम अपने जीवन के द्वारा खोल कर प्रभु को देखेंगे। इनके लिए विद्यालय के दरवाजे तो बंद थे मगर इन्होंने ऐलान किया, कोई बात नहीं हम जिन्दगी की किताब पढ़ेंगे। गज़ब की बात यह जिन्दगी की किताब को पढ़कर बहुत बहुमूल्य रत्न कबीर ने जगत् के सम्मुख रखे जो किसी विद्यालय से नहीं पढ़े, न पढ़ाए जा सकते हैं।

जीवन के मंदिर में ही भगवान की झलक देखी और उसका ऐलान कर जिक्र भी किया–

दुइ दुइ लोचन पेखा॥
हउ हरि बिनु अउरु न देखा॥

(अंग ६५५)

इस तरह कबीर के साथ भक्ति का जन्म हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी भक्तों में से सिरमौर श्रेणी में बैठे हैं। इनका आज का पावन और पवित्र वाक्य बड़े सहज शब्द हैं मगर इसमें जीवन का, संसार का, प्रभु का बहुत बहुमूल्य ज्ञान है। मनुष्य का अस्तित्व परिपूर्ण परमात्मा ने ऐसा बनाया है इसका आधा जीवन बाहर है, आधा भीतर है। बाहर पवन न चले तो सारा संसार मुर्दा हो जाएगा, मगर मेरे भीतर पवन न चले मैं मुर्दा हो जाऊँगा। संसार तो चलता रहेगा। अगर बाहर पवन चल रही है तो मेरे भीतर भी चलनी चाहिए, पानी बाहर सागर में है, दरियाओं में है, जमीन के नीचे है। ऊपर बादल भी बरसते हैं। यह तो सब कुछ है मगर मेरे इस जीवन सागर में भी पानी होना चाहिए। सागर सूख जाएँ, दरिया सूख जाए, जमीन के नीचे से पानी न मिले, ऊपर से बादल न बरसें, जमीन का सारा जीवन सूख जाएगा। पशु-पक्षी, वनस्पति, मनुष्य सारे सूख जाएँगे। सिर्फ बादल ही न बरसते रहें, मेरे जीवन में भी इसकी वर्षा हो। इसी तरीके से हम देखते हैं कि बाहर सूर्य बुझ जाए तो सारा जीवन बुझ जाएगा। पक्षी, पशु बुझ जाएँगे, वनस्पति बुझ जाएगी, मनुष्य भी बुझ जाएँगे। यह दो दीए आँखें बुझ जाएँगी। बाहर सूर्य बुझ जाए, अंधेरा हो जाएगा, पूरा जीवन अंधकार हो जाएगा। ठीक है इतना विशाल सूर्य बाहर चाहिए मगर उसका अंश मेरे शरीर में भी चाहिए। बाहर सूर्य ठंडा पड़ जाए तो ब्रह्माण्ड ठंडा पड़ जाएगा। भीतर अग्नि ठंडी पड़ जाए तो मैं ठंडा पड़ जाऊँगा। भीतर का जीवन न प्राप्त हो तो मनुष्य भीतर से मुर्दा हो जाता है।

आखा जीवा विसरै मरि जाउ॥ (अंग ३४९)

मरणं बिसरणं गोबिंदह॥ जीवणं हरि नाम ध्यावणह॥

(अंग १३६१)

भीतर प्रभु का चिन्तन नहीं तो फिर मैं भीतर से दुखी हो जाऊँगा। बाहर का सारा जीवन पदार्थों का है और पदार्थ सारे का सारा धन आश्रित है। भीतर के सारे दैवी गुण रस और आनंद परमात्मा आश्रित हैं। मुझे अच्छा मकान चाहिए तो धन के बिना तो नहीं मिलेगा। मुझे अच्छे कपड़े पहनने के लिए चाहिए तो

पैसों के बिना तो नहीं मिलते। फिर मुझे इस तन की भूख मिटाने के लिए भोजन चाहिए, साग सब्जी चाहिए तो धन के बिना तो नहीं मिलनी। संसार की कोई वस्तु धन के बिना नहीं मिलती। बाहर का भगवान धन है। भीतर का भगवान धर्म है। बाहर से सारा जीवन मुर्दा हो जाएगा अगर धन नहीं है।

हिंदू भाईयों ने एक मिथ्या बनाई हुई है। लक्ष्मी को पहले रखा है और नारायण को उसके पश्चात। कबीर भी पहल देते हैं-

भूखे भगति न कीजै॥ यह माला अपनी लीजै॥

(अंग ६५६)

हे प्रभु! भक्ति तेरी तो होगी पहले भोजन चाहिए। लक्ष्मी ही भोजन है, लक्ष्मी ही कपड़े हैं, लक्ष्मी ही पदार्थ है, लक्ष्मी ही सारा साजो सामान है। भीतर का पूरा आनंद नारायण के बिना नहीं होगा। कई मूर्खों ने ऐसा किया कि नारायण को हटा ही दिया है। लक्ष्मी ही लक्ष्मी है। अनेकों के घरों दुकानों में भी नारायण कोई नहीं, लक्ष्मी ही लक्ष्मी है। यह भीतर से भी लक्ष्मी के पुजारी हैं, नारायण के पुजारी नहीं। नारायण का पुजारी तो कई करोड़ों में से एक आधा होगा। बहिर्मुखी मनुष्य, जिसने भीतर नहीं देखा, लक्ष्मी का पुजारी है, नारायण का पुजारी नहीं। निन्दा नहीं है लक्ष्मी की, नारायण के साथ है, प्रभु ने ऐसा सिलसिला बनाया है।

मैं अर्ज़ करूँ, लक्ष्मी सिर्फ बाहर की जरूरतें पूरी करती है, भीतर की नहीं। जैसे-जैसे बहिर्मुखी जिन्दगी में बहुत रौनक होती जा रही है, वैसे-वैसे धार्मिक मंदिर वीरान हो रहे हैं। धन कमाने के लिए मनुष्य के पास हर तरह का समय है। अगर रात की डयूटी है तो रात को ही देनी है और अगर अमृत समय धन का लोभ हो सकता है तो अमृत समय भी उठना है। धर्म कमाना है तो अमृत समय के दो घण्टे भी कम हैं। नास्तिक से नास्तिक मनुष्य भी धन की पूजा नहीं करता, धन का प्रयोग करता है। चांदी के रुपए रखे जाएँगे दूध से धोकर, फिर उनके आगे पाठ किया जाएगा, रुपयों को पाठ सुनाया जाएगा। माथा टेकेंगे। फिर फूल चढ़ाएँगे, पैसा पूजा जाता है। उसका मुख्य कारण है बाहर का पूरा जीवन धन आश्रित है, धन परमात्मा है। बहिर्मुखी मनुष्य जो जी ही बाहर रहा है, भीतर की कोई खबर नहीं। उसके लिए फिर धन भगवान है। वह फिर धन की खातिर देश को बेच सकता है, कौम को बेच सकता है, धर्म को बेच सकता

है, कला को बेच सकता है, ज्ञान को बेच सकता है, दिमाग को बेच सकता है, वेश्या अपना तन बेचती है। इतना धन महान हो गया कि बेचना है पाठ, बेचना है धर्म, बेचना है कीर्तन, बेचनी है कथा। किए हुए पाठ मिलते हैं, पैसे दे दो। यह फिर बिकती भी है। जितना हमें मूल्य चाहिए अगर कोई देने के लिए तैयार हो जाएँ तो हम सब कुछ बेचने के लिए तैयार हो जाएँगे। अगर परमात्मा की कथा की कीमत हो सकती है तो यह परमात्मा की कथा नहीं होगी, मनुष्य की कथा होगी। किसी पदार्थ की कथा होगी।

हैरान हुआ एक जगह मैं। विवाह (आनंद कारज) था और शिक्षा के लिए मुझे बुलाया। मैंने कहा मेरी आत्मा यहाँ नहीं मानती कि गुरमति की शिक्षा दूँ। यह 27 वर्ष की बच्ची और वह 62 वर्ष का व्यक्ति जो दूल्हा बन कर आया है। देखा कि वह 62 साल का करोड़पति अरबपति। मैंने कहा यह तो खरीद-फरोख्त हो रही है, शादी नहीं हो रही है। धन बेईमानी से भी मिल सकता है, धन ठगियों से भी मिल सकता है, धन चालाकियों से भी मिल सकता है, धन पाप से भी मिल सकता है।

पापा बाझहु होवै नाही (अंग ४१७)

बहुत ज्यादा चाहिए तो बहुत पाप करने पड़ेंगे। धर्म न छीन कर मिलेगा, न लूट कर मिलेगा, न चोरी से मिलेगा, न ठगी से मिलेगा। इन सभी से विपरीत अपनी मानसिक दिशा बनानी होगी। धन अवगुणों की वजह से भी मिल सकता है, धर्म अवगुणों करके नहीं मिलेगा। धन पाप करके भी मिल सकता है, धर्म पाप करके नहीं मिलेगा। धन चोरी करके भी मिल सकता है, धर्म चुरा नहीं सकते। अगर किसी को धर्म की प्राप्ति हो जाए तो यकीन मानो उसको भी कोई चोर चुरा नहीं सकता, बाहर मेरे पास कितना ही धन हो, खतरा तो है। कहीं बाढ़ आ सकती है और मेरी पकी फसल बर्बाद हो सकती है। मेरा ऊँचा सुन्दर मकान तबाह हो सकता है। मगर जिसको धर्म की दौलत प्राप्त हो जाए तो पहले, एक तो चोरी का कोई खतरा नहीं। क्यों? इस धन का चुराया ही नहीं जा सकता। दूसरा इस धन को आग भी नहीं जला सकती। इस धन के ऊपर हकूमत टैक्स भी नहीं लगा सकती। गुणों की दौलत बढ़ती जा रही है मगर कर मुक्त है। यह धर्म एक ऐसी दौलत है, उल्लास है, आनंद है। यह उस मनुष्य को मालूम ही नहीं होता जिसका सब कुछ बाहर ही है। अन्तर्मुखी

मनुष्य धर्म का पुजारी होता है। कोई कहे मैं धन का मालिक हूँ, मैं मकान का मालिक हूँ। कबीर कहते हैं, ऐसी बात नहीं है। यदि धन चला जाए तो मनुष्य रोता है, मनुष्य खत्म हो जाए तो धन नहीं रोता कबीर ने साफ कह दिया है–

खसमु मरै तउ नारि न रोवै॥

क्यों?

उसु रखवारा अउरो होवै॥ (अंग ८७१)

उसको संभालने वाला दूसरा हो जाता है, पुत्र हो जाता है, पौत्र हो जाता है, पड़पौत्रा हो जाता है, भाई हो जाता है नहीं तो सरकार हो जाती है। यह जमीन खाली नहीं रहेगी, किसी न किसी का कब्जा हो जाएगा। यह मकान लावारिस नहीं होगा, कोई न कोई मालिक हो जाएगा।

रखवारे का होइ बिनास॥ आगै नरकु ईहा भोग बिलास॥

(अंग ८७१)

चोटी के फिलास्फर, चिन्तक, वकील सभी धन से प्रभावित हैं। धर्म से नहीं। संत भी वह बड़ा माना जाता है जिसकी इमारतें बड़ी हो। अगर हमने बाहर के पानी की निन्दा की तो भीतर का भी नहीं रहेगा। धन की अगर निन्दा की तो फिर धर्म की प्राप्ति नहीं कर सकते। गरीब मनुष्य है, तीन दिन का भूखा है, उसको कहो वाहिगुरु वाहिगुरु जप। कहता है, बाद में करेंगे, पहले रोटी का मसला हल कर। धन का लोभ चोर बना देता है, धर्म का लोभ संत बना देता है। लोभ को बदलना है। धन का लोभ है। इसको बदल कर इसकी जगह धर्म का लोभ पैदा करें। आप कहोगे कि धर्म का भी लोभ होता है? होता है। श्री गुरु अर्जुन देव जी महाराज कहते हैं– हे प्रभु! मैं अब बड़ा लोभी हूँ–

कोटि करन दीजहि प्रभ प्रीतम
हरि गुण सुणीअहि अबिनासी राम॥

(अंग ७८१)

तूने मुझे दो कान दिए हैं और तेरी प्रशंसा लाखों जगह पर हो रही है। कहीं पाठ हो रहा है, कहीं पूजा हो रही है, कहीं जप हो रहा है। एक ही जगह मैं सुन सकता हूँ। गुरु अर्जुन देव जी महाराज कहते हैं कि दो ही हाथ दिए हैं। मैं

एक ही जगह सेवा कर सकता हूँ। मुझे करोड़ों हाथ दे। सिर्फ एक ही जुबान दी है, थक जाती है, कण्ठ भी थक जाते हैं। मुझे करोड़ों जुबानें दे, हे प्रभु! मैं जपता ही रहूँ। भाई गुरदास जी कहते हैं कि लोभी हैं मेरे कान। जैसे धन का भूखा धन से नहीं तृप्त होता, वैसे धर्म बारे भी ऐसा ही है-

माधउ जल की पिआस न जाइ॥ (अंग ३२३)

प्रभु जो तुम्हारे नाम का जल है, इतना रस है कि पीता हूँ तो प्यास बढ़ती है। बड़ा लोभी हूँ मैं, प्यास मिटती ही नहीं। ऐसे-ऐसे मुझे अभ्यासी मिले हैं जो इस जिन्दगी में कहते हैं ज्ञानी जी! तृप्त तो कोई नहीं जप कर। करें क्या। यह जो कंठ है थक गया है। यह घोड़ा थक गया है, नहीं चलता, हम तो चलना चाहते हैं। अधिक जपना चाहते हैं, अधिक रस लेना चाहते हैं, पर क्या करें अब शरीर नहीं चलता। धन का लोभ धन से नहीं मिटता। यहाँ सिकंदर जैसे नहीं संतुष्ट हुए तो अन्यों ने क्या संतुष्ट होना है। धन का लोभ मनुष्य को बेईमान बना देता है, धर्म का लोभ मनुष्य को भगवान बना देता है। धन के लोभ में तूने बहुत जी कर देख लिया है, अब धर्म का लोभ पैदा कर। धर्म का लोभ शराफत को जन्म देगा, सच्चाई को जन्म देगा, ईमानदारी को जन्म देगा मगर धन का लोभ बेईमानी को जन्म देगा।

पूरी दुनिया में चोरी बढ़ गई है, क्योंकि पूरी दुनिया का भगवान तो धन है। नारायण तो है नहीं। क्या हुआ राजनीतिक है, धार्मिक है, साधारण सामाजिक मनुष्य है, चोरी हर स्तर पर मौजूद है। मैंने पढ़ा है कि शेरनी का दूध सोने के बर्तन में टिकता है, किसी और बर्तन में नहीं। फट जाता है। ऐसा धर्म ग्रंथों में लिखा है। पहले तो शेरनी का दूध निकालना ही मुश्किल है। मैंने ऐसे ऐसे अभ्यासी देखे हैं जिनकी जिन्दगी में प्रगट तो हो गया, पर संभाल न सके।

इंग्लैंड के एक शहर की बात है। एक व्यक्ति आया मेरे पास घबराया हुआ। मैं उसे जानता था। पांच सात साल पहले जब वह मुझे मिला तो यह कहा कि कीर्तन मैंने बहुत सुन लिया है। कथा सुन ली है। 16-16 घण्टे पाठ करता रहता हूँ, बात तो कुछ नहीं बनी। मस्कीन जी! प्रभु है कि नहीं ? ऐसा नहीं कि यह सब कुछ ईमानदारी से न करता हो। पूरी ताकत से पाठ करता था, अमृत समय उठता था। मैंने कहा अब कल से जब तू पाठ करेगा तो अंदर से यह ख्याल निकाल देना। कुछ भी हो, जप करना और परमात्मा को समर्पण

कर देना जैसे बीज धरती के हवाले करते हैं। अगर यह बीज धरती को नहीं दोगे तो यह फल नहीं बन सकेंगे। तेरे हाथों में पड़े पड़े गल जाएँगे। लोग पाठ करते हैं और फिर पाठ अपने पास रख लेते हैं और लोगों को सुनाते हैं कि आज मैंने दस पाठ जपुजी साहिब के किए। चेहरे पर एक पंक्ति की झलक नहीं दिखाई देती, दस पाठ किए हैं तूने? पाठ किया है, जप किया है, कीर्तन किया है, परमात्मा को अर्पण कर दो, वह स्वयं फलीभूत करेगा। मैंने उसे अचानक सहज ही कह दिया और निज़ी अनुभव मेरा नहीं था इस संबंध में।

यह भी ख्याल छोड़ देना चाहिए है कि मन जुड़ता नहीं। उनको कौन बताए कि मन का जुड़ जाना तो फल है। वह कहते हैं कि पहले मन जुड़े, फिर पाठ करेंगे। पहले फल मिल जाए, बीज उसके पश्चात बोएँगे। यह किस तरह हो सकता है? तीसरे दिन जब वह मुझे मिला तो चेहरा कुछ और था। रंगी हुई आत्मा। कहता है ज्ञानी जी! आज बात बन गई। इस तरह की रोशनी जिन की जिन्दगी में अचानक प्रगट हो जाती हैं, मैं इस तरह के आठ नौ मनुष्यों को जानता हूँ। इस बार जो घटना घटी वह यह है कि वह अब मेरे पास आया तो घबराया हुआ था। चेहरे पर अशांति के आसार थे। मैंने कहा, बात क्या है? कहता है, सुबह अभ्यास में मैं बैठा था और मैं जमीन से आठ फुट ऊपर उठ गया। पता तब लगा जब मेरे घर की छत जो थी जहाँ मैंने महाराज का प्रकाश किया हुआ था, वह आठ फुट ऊँची थी। मेरा सिर टकरा गया। मैंने जब देखा तो मैं घबरा गया।

मैंने कहा बात यह है कि तब भी तेरे से गलती हुई थी और अब फिर तूने गलती की है। जमीन हर चीज को खींचती है। कुछ भी ऊपर फैंको, सब नीचे आएगा। जमीन में आकर्षण है। ऐसा विज्ञान कहता है कि 400 मील तक आकर्षण का दायरा है। इससे आगे जो वस्तु चली जाए, फिर जमीन नहीं खींचती। हजारों वर्षों से संतजन कहते रहे हैं कि यह मनुष्य के ध्यान को भी नीचे खींचती है। अकेले पदार्थ को नहीं खींचती, विचार को भी खींचती है, स्मृति को भी खींचती है। जैसे जैसे कोई नाम जपता है, धन की पकड़, यौवन की पकड़, प्रभुता की पकड़, संसार की पकड़ कम होती है तो फिर जमीन का आकर्षण खत्म हो जाता है। वह मनुष्य ऊपर उठता है। मैंने उसको कहा, भाई! तेरे तो चरण पूजने चाहिए, मगर तू घबरा गया है। मैंने कहा कि एक घबराहट तेरे आगे और भी आ सकती है, उसके लिए मैं तुझे पहले सावधान कर दूँ।

हरि के नाम कबीर उजागर।।
जनम जनम के काटे कागर।।

(अंग ४८७)

धरम राइ दरि कागद फारे जन नानक लेखा समझा।।

(अंग ६९८)

पुरातन संस्कारों का जो भीतरी ढांचा है, जिस दिन नाम जपने में सुरति बहुत बुलंदियों को छूती है, वह सारे संस्कार मिटते हैं, जलते हैं और जब पूर्ण तौर पर वह संस्कार मिटने लगते हैं तो मनुष्य को इस तरह लगता है जैसे मुझे मौत आ रही है, मैं ही मिट रहा हूँ। वहाँ भी मनुष्य घबरा जाता है। दरअसल मनुष्य का पुराना ढांचा मिट जाता है। इसलिए वह जो आध्यात्मिक जिन्दगी है, उसको कह दिया गया है दूसरा जन्म। एक जन्म हुआ था माता-पिता से, एक जन्म हुआ है प्रभु के भजन से। माता ने सुत पैदा किया है, प्रभु की बन्दगी ने संत पैदा कर दिया। सुत मरता है, संत पैदा होता है। तेरे साथ ऐसा भी होगा क्योंकि जो तेरी श्रद्धा है और जितना तू जप करता है, यह भी होगा। इसको मुहम्मद इकबाल कहते हैं कि तू किताब को पढ़ने वाला है, किताब में जो कुछ है वह तू नहीं है। तू ग्रंथ पढ़ने वाला है, तू पोथियाँ पढ़ने वाला है, पोथी के बीच में जो कुछ है, वह तू नहीं है। मैं अर्ज़ करूँ, लोभी किसी को भी धोखा दे सकता है। गुस्ताखी माफ! गुरु को भी धोखा दे सकता है।

सोने की पालकी गुरु गोबिन्द सिंघ जी महाराज ने बनवाई थी। पटना की बात है। माता जी ने सोना दिया और जब पालकी बन कर आई है, तो सतगुरु ने सेवकों को कहा कि लकड़ियाँ इकट्ठी करो, चिता बनाओ और थड़े के ऊपर पालकी को रखो। माता जी भी बहुत रोके कि हमने सोना दिया था। माता जी! कितना सोना दिया था। हमने 207 तोले सोना दिया था। पर अब हुक्म महाराज का कि जलानी है। आग दिन भर जलती रही जो बचा सोना, तोला तो 7 तोले। गुरु से ठगी।

लोभी का वेसाहु न कीजै (अंग १४१७)

लोभी धर्म को भी नहीं छोड़ता। कबीर समझाते हैं, उनका यह पावन पवित्र वाक्य श्रवण करें। वाहिगुरु साहिब जी।

सोरठि १ओ सतिगुरु प्रसादि॥

सोरठि राग में कबीर जी का यह पावन पवित्र वाक्य है। ओंकार एक ऐसी धुन है जिससे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई है और वो केवल एक है। वह सत्यस्वरूप है। उससे सारा ज्ञान आता है, इसलिए वह गुरु है। स्वभाव कारण प्रसादि है, करुणाकर है, दयालु है।

बहु परपंच करि पर धनु लिआवै॥

बड़े यत्न करके, बड़े छल करके दूसरे का धन छीन कर लाता हैं। ठगी बेईमानी से लाता है। यह जो तू छल कपट के साथ पराया धन लाया है, अपना धन तो परिश्रम से ही हो सकता है। मैंने कुछ दिनों में करोड़पति बनना है, छल कपट के बिना नहीं।

सुत दारा पहि आनि लुटावै॥ १॥

मगर गज़ब की बात है कि संसार को तो लूट कर लाता है मगर पुत्रों के पास और पत्नी के पास फिर उसी धन को लुटाता है। लूट कर खुशी होती है दूसरे को, लुटा कर भी खुशी मिलती है मगर शर्त है अपने हों।

मन मेरे भूले कपटु न कीजै॥

हे मेरे भूले हुए मन! यह कपट और छल न कर। क्यों?

अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै॥ १॥ रहाउ॥

आखिर अंत में जिन पुत्रों, मित्रों, पत्नी की खातिर तूने दूसरों को लूटा है, यह लेखा केवल तुझे देना पड़ेगा, पत्नी, पुत्रों से नहीं पूछा जाएगा।

छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै॥

दिन-ब-दिन तन कमजोर होता है मगर लोभ बहुत बलवान होता है। लोभ, अहंकार, काम नहीं बूढ़ा होता, तन बूढ़ा होता है।

तब तेरी ओक कोई पानीओ न पावै॥ २॥

जिनके ऊपर तूने सभी कुछ लुटाया है और जिनकी खातिर तूने सब कुछ किया है, जब बिल्कुल कमजोर हो जाएगा तो यह तेरी अंजलि में पानी भी

डालने के लिए तैयार नहीं होंगे। यह तेरे पास भी नहीं आएँगे।

कहतु कबीरु कोई नही तेरा॥

एक बात स्पष्ट करके जान ले। उस अवस्था में और अंतिम अवस्था में कोई तेरा साथी नहीं।

हिरदै रामु की न जपहि सवेरा॥ ३॥ १॥

समय आ गया है, तू सचेत क्यों नहीं होता? प्रभु का नाम जप हृदय के साथ ताकि तेरी जिन्दगी सफल हो सके। साहिब रहमत करें लोभ जरूर पैदा हो, पर धर्म का, ताकि धर्म के लोभ कारण हम संत बन सकें, गुरमुख बन सकें, ब्रह्मज्ञानी बन सकें। भूल चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

ऐसा गुरु वडभागी पाईऐ

सूही महला ५॥

साजनु पुरखु सतिगुरु मेरा पूरा तिसु बिनु अवरु न जाणा राम॥
मात पिता भाई सुत बंधप जीअ प्राण मनि भाणा राम॥
जीउ पिंडु सभु तिस का दीआ सरब गुणा भरपूरे॥
अंतरजामी सो प्रभु मेरा सरब रहिआ भरपूरे॥
ता की सरणि सरब सुख पाए होए सरब कलिआणा॥
सदा सदा प्रभ कउ बलिहारै नानक सद कुरबाणा॥ १॥
ऐसा गुरु वडभागी पाईऐ जितु मिलिऐ प्रभु जापै राम॥
जनम जनम के किलविख उतरहि हरि संत धूड़ी नित नापै राम॥
हरि धूड़ी नाईऐ प्रभू धिआईऐ बाहुड़ि जोनि न आईऐ॥
गुर चरणी लागे भ्रम भउ भागे मनि चिंदिआ फलु पाईऐ॥
हरि गुण नित गाए नामु धिआए फिरि सोगु नाही संतापै॥
नानक सो प्रभु जीअ का दाता पूरा जिसु परतापै॥ २॥
हरि हरे हरि गुण निधे हरि संतन कै वसि आए राम॥
संत चरण गुर सेवा लागे तिनी परम पद पाए राम॥
परम पदु पाइआ आपु मिटाइआ हरि पूरन किरपा धारी॥
सफल जनमु होआ भउ भागा हरि भेटिआ एकु मुरारी॥
जिस का सा तिन ही मेलि लीआ जोती जोति समाइआ॥
नानक नामु निरंजन जपीऐ मिलि सतिगुरु सुखु पाइआ॥ ३॥
गाउ मंगलो नित हरि जनहु पुंनी इछ सबाई राम॥
रंगि रते अपुने सुआमी सेती मरै न आवै जाई राम॥
अबिनासी पाइआ नामु धिआइआ सगल मनोरथ पाए॥

सांति सहज आनंद घनेरे गुर चरणी मनु लाए॥
पूरि रहिआ घटि घटि अबिनासी थान थनंतरि साई॥
कहु नानक कारज सगले पूरे गुर चरणी मनु लाई॥ ४॥ २॥ ५॥
(अंग ७८०)

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी! आज का महावाक्य चार पदों में है। पहले पद में जो केन्द्रीय ख्याल मेरे गुरु ने दिया है, मनुष्य सामाजिक प्राणी है और सामाजिक संबंधों के बिना नहीं रह सकता। बच्चे के जन्म समय अगर मां मर जाती है, पिता मर जाता है तो इस बच्चे का जीना कठिन होगा। अगर भाई नहीं है, बहन भी नहीं है। जन्म के समय मानुषी बच्चे को मां बाप चाहिए। फिर संबंध सिर्फ यहीं ही पूरे नहीं होते, बहन-भाई भी चाहिए, मित्र भी चाहिए। समाप्ति यहाँ नहीं होती, फिर पत्नी भी चाहिए, बच्चे भी चाहिए। अगर स्त्री का रूप है तो उस पर भी यही नियम लागू होता है। उसे मां-बाप, बहन-भाई, पति चाहिए। एक उम्र ऐसी आ गई जब मां-बाप की मांग ढीली पड़ जाती है, पति की मांग प्रबल हो जाती है।

बाली रोवै नाहि भतारु॥ नानक दुखीआ सभु संसारु॥
(अंग ९५४)

अब बाली को, इस नवयुवती को भतार चाहिए, पति चाहिए। जन्म लेते ही माता-पिता, बहन-भाई चाहिए। किसके आगे दिल की बात कहेगी, सहेली चाहिए। अब पति चाहिए। पति से ही प्यास नहीं मिटती, अब बच्चे चाहिए, पुत्र चाहिए। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, सामाजिक रिश्तों के बिना नहीं रह सकता। इसको यह सभी संबंध चाहिए। यह अपने प्यार की तृप्ति इन सभी संबंधों में समय के साथ-साथ करता है। एक यह पहलू है।

जितने भी सामाजिक संबंध हैं, लंबा चौड़ा सिलसिला बन जाता है। ननिहाल है, फिर ददिहाल हैं, फिर ससुराल है। यह संबंध एक-एक करके टूटते हैं। मैं टूट गया तो सारे संबंध टूट जाते हैं और मेरा कोई संबंधी टूट गया फिर एक संबंध तो टूट गया। सामाजिक रिश्ते टूटते हैं और दो रूपों में टूटते हैं। एक तो सदैव टूट जाता है, मौत आ गई, इन संबंधियों में से कोई मर गया। कुछ नए संबंध जुड़ते हैं और कुछ पुराने संबंध टूटते हैं। मां-बाप चले गए हैं, पुत्र, पोत्रे,

पड़पोत्रे आ गए हैं। इसे भक्त सिरमौर श्री रविदास जी महाराज ने जिस ढंग से बयान किया है, यह भी सुनो। शरीर क्योंकि चमड़ी है तो रविदास कहते हैं–

चमरटा गांठि न जनई॥ (अंग ६५९)

इस शरीर को जूती कहते हैं। कबीर ब्रह्मज्ञानी हैं, उनके ब्रह्मज्ञान में भी जुलाहापन झलकता है। वह कहते हैं–

कोरी को काहू मरमु न जानां॥ (अंग ४८४)

मालूम है कोरी किसको कहते हैं? जुलाहे को। कबीर कहते हैं, मुझे कोरी कह कर भाग रहे हो और जुलाहा जुलाहा, शुद्र शुद्र पुकारते हो तो परमात्मा भी कोरी है, बहुत बड़ा जुलाहा है।

सभु जगु आनि तनाइओ तानां॥

मैं तो जरा–सा ताना पेटा करता हूँ। उसने तो देखो कितना ताना तना हुआ है। मैं तो छोटा–सा शुद्र हूँ, वह कितना बड़ा शुद्र है। अब इस तरह के बोल कोई जुलाहा कह सकता है। जूतियाँ गांठने वाला यह कह सकता है–

चमरटा गांठि न जनई॥

मैं जूती गांठना नहीं जानता।

लोगु गठावै पनही॥

यह जो दुनिया है यह गंठवाती है। हम नहीं गांठते। क्यों?

लोगु गंठि गंठि खरा बिगूचा॥
हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा॥

(अंग ६५९)

लोग गंठा गंठा कर ख्वार हो रहे हैं। अगर शरीर जूती है तो बाकी शरीर भी जूती है। कभी पिता से टूटती हैं और कभी जोड़ता है, कभी भाई से टूटती है और कभी जोड़ता है, कभी पत्नी से टूटती है फिर जोड़ता है, कभी बच्चों से टूटती है और फिर जोड़ता है, कभी मित्रों से टूटती है और फिर जोड़ता है। पूरी जिन्दगी टूटते और जोड़ने में ही गुजर जाती है। ऐसा एक भी घर नहीं है जहाँ व्यक्तिगत तौर पर तनाव पैदा न हों और जहाँ व्यक्तिगत तौर पर रिश्तों में

फर्क नहीं पड़ता। हर रिश्तें में मन-मुटाव हो जाता है, जूती फट गई फिर गांठते हैं। अब रविदास कहते हैं कि सारी जिन्दगी फटी है जूती, गांठ गांठ के लोग ख्वार हो जाते हैं।

लोगु गंठि गंठि खरा बिगूचा॥
हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा॥

(अंग ६५६)

हमने कभी गांठने की कोशिश नहीं की। क्यों? टूटी नहीं कभी।

तोरी न तूटै छोरी न छूटै ऐसी माधो खिंच तनी॥

(अंग ८२७)

इसको गुरु अर्जुन देव जी महाराज ने इस पावन पवित्र वाक्य में बयान किया है। रिश्ता कोई भी न हो, कुछ कम हो जाता है। पत्नी नहीं है, बहन नहीं है, भाई नहीं है, पिता नहीं है, मित्र नहीं है, कुछ नहीं है। पुत्र नहीं है, कमी रहती है। पिता नहीं है, कमी रहती है। भाई नहीं है, बहन नहीं है, कमी रहती है। मनुष्य सामाज़िक रिश्तों में रहता है। यह जो संबंध सदैव चाहिए हों तो फिर क्या करें? एक संबंध में केवल एक ही रूप है। पिता केवल पिता ही है, मां नहीं है। मां मर गई, नहीं रही तो फिर पिता की परीक्षा होती है, पिता अपने पितृत्व में पूरा उतरता है कि नहीं। यह अब बच्चों के साथ उस ढंग का व्यवहार रख सकेगा कि नहीं।

मां मरने पर बच्चे बहुत बड़ी कमी महसूस करते हैं, पर एक रिश्ता ऐसा है जिससे हम सारे ही संबंध जोड़ सकते हैं। वह रिश्ता है-

तूं मेरा पिता तूंहै मेरा माता॥ तूं मेरा बंधपु तूं मेरा भ्राता॥
तूं मेरा राखा सभनी थाई ता भउ केहा काड़ा जीउ॥

(अंग १०३)

हे प्रभु! तू मां भी है, तू पिता भी है, तू बंधु भाई भी है, तू सखा मित्र भी है। सारे संबंध जो परमात्मा से जोड़ लेता है तो सारे संबंधों की झलक जिसको परमात्मा में मिलती है। फिर उसकी दृष्टि क्या बन जाती है, वह अपनी माता में भी परमात्मा को देखता है। यह मां नहीं मिली, यह परमात्मा मिला है। पिता नहीं मिला मुझे, यह परमात्मा मिला है पिता के रूप में।

मात पिता सुत बंधप भाई॥
नानक होआ पारब्रहमु सहाई॥

(अंग ८०५)

तू पिता है मेरा, मगर हद हो गई तू ही मुझे मिला है पुत्र रूप में। अगर सभी रूप परमात्मा के हैं तो पुत्र शैतान का रूप है, पुत्र ही भगवान का रूप है। हे प्रभु! मैं छोटा था, तू मां के रूप में मिला है, पिता के रूप में मिला है। आज मैं बूढ़ा हो गया हूँ, तू पुत्र के रूप में मिला है।

बिरधि भइआ ऊपरि साक सैन॥
मुखि अपिआउ बैठ कउ दैन॥

(अंग २६६)

यह पुत्र मेरे मुख में खाना डालता है, बूढ़ा हूँ मैं। प्रभु तू ही मिला है पुत्र रूप में।

हमारे देश में बड़ी कोशिश की गई कि जो पति है वह पत्नी को देवी कहे और जो पत्नी है वह पति को परमात्मा कहे। अब एक देवी है, एक परमात्मा है, फिर घर तो मंदिर बन गया। अगर पति भूत दिखाई दे और पत्नी डायन दिखाई दे, फिर तो घर श्मशान घाट बना हुआ है। घर धर्मशाला हो, यह तो कोई कोई है। घर हरिमंदिर बन गया है, यह तो कोई कोई होता है। जब सामाजिक रिश्तों में प्रभु की झलक मिले तो यही ब्रह्मज्ञानी है, यही संत है। जिसको सामाजिक रिश्तों में प्रभु की झलक नहीं मिलती, भाई के साथ मुकद्दमेबाजी है, पिता की कोई देख-रेख नहीं, मां के दुख सुख में शामिल नहीं होता, बहन का कभी हाल चाल नहीं पूछा, इसे सचखंड के दर्शन हुए ही नहीं। जो एक दफा परमात्मा की झलक पा लेता है तो परमात्मा में उसको सभी रिश्ते दिखाई देते हैं। पारिवारिक संबंधों में निरंकार की झलक मिलती है, यह गुरुमुख की, ब्रह्मज्ञानी की पहचान है। आखिरी अर्थ स्वयं श्रवण करें।

सूही महला ५॥

साजनु पुरखु सतिगुरु मेरा पूरा तिसु बिनु अवरु न जाणा राम॥

वह जो मेरा सतगुरु है वह पुरष ऐसा सज्जन है, मैं उसके बिना किसी को पूर्ण सज्जन नहीं जानता। यही मेरा सज्जन है, यही पूर्ण गुरु है, यही परमात्मा है क्योंकि मैं इसमें देखता हूँ। क्या देखता हूँ?

मात पिता भाई सुत बंधप जीअ प्राण मनि भाणा राम॥

जैसे मन को मां अच्छी लगती है, पिता अच्छा लगता है, पुत्र अच्छा लगता है, भाई अच्छा लगता है, यह सारे रिश्ते मुझे गुरु में मिलते हैं। जिसको गुरु मिल जाता है, उसकी परिवार में इस तरह दृष्टि बन जाती है। यह सारे संबंध हम परमात्मा से जोड़ सकते हैं।

जीउ पिंडु सभु तिस का दीआ सरब गुणा भरपूरे॥

उसी का बनाया हुआ यह तन है और इसके तन से जो जी सका, जिससे पूरी हरकत है, यह उसी परमात्मा की दी हुई देन है।

अंतरजामी सो प्रभु मेरा सरब रहिआ भरपूरे॥

वह अंतर्यामी है। घट-घट की जानने वाला है और व्यापक है।

ता की सरणि सरब सुख पाए होए सरब कलिआणा॥

उसकी शरण में मुझे सारे सुखों की प्राप्ति हुई है। हर तरह का कल्याण प्राप्त हुआ है।

सदा सदा प्रभ कउ बलिहारै नानक सद कुरबाणा॥ १॥

मैं सदा ही परिपूर्ण परमात्मा पर बलिहारी जाता हूँ, जिसमें मुझे सारे रिश्तों की झलक मिलती है।

ऐसा गुरु वडभागी पाईऐ जितु मिलिऐ प्रभु जापै राम॥

ऐसा गुरु बड़े भाग्य से प्राप्त होता है, जिसके मिलते परमात्मा की समझ आ जाए। भक्त कबीर कहते हैं-

कबीर माइ मूंडउ तिह गुरू की जा ते भरमु न जाइ॥
आप डुबे चहु बेद महि चेले दीए बहाइ॥

(अंग १३६९)

कहते हैं जिसकी संगत में बैठ कर परमात्मा का पता ही न चले, जिसके उपदेश में से परमात्मा की झलक ही न मिले, जिसके बोलों में से परमात्मा प्रगट ही न हो तो कबीर ने ऐसे शब्द इस्तेमाल किए हैं-

जनम जनम के किलविख उतरहि हरि संत धूड़ी नित नापै राम॥

जन्मों जन्मों के पाप धुल जाते हैं, जब इस तरह के संत की धूल से मनुष्य स्नान करता है, जिसके शब्द सत्य तक पहुँचे हुए हैं। माता-पिता के शरीर का जो तत्व है, वह सुत है जो सत्य का तत्व है वह संत है। इसलिए वाणी स्पष्ट कहती है कि संत और राम में कोई भेद नहीं है, समान हैं। आदि काल के चारों धर्म-सनातन मत, जैन मत, बौद्ध मत, सिक्ख मत। सिक्ख मत चरण-धूल की महिमा गायन करता आ रहा है, मगर इस्लाम भी गायन करता है। गुरु नानक कहते हैं मेरे पास इस तरह की कोई शक्ति नहीं है कि तेरे कदमों तक पहुँच सकूँ। क्यों, आपके पास शक्ति क्यों नहीं? साहिब कहते हैं-

बदबखत हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक॥

(अंग ७२१)

मेरी किस्मत अच्छी नहीं। बड़े भाग्य की निशानी क्या है? पुत्र मिल गया। बच्चे तो पशुओं को भी मिल जाते हैं। धन मिल गया, रिज़क मिल गया, पति पत्नी मिल गए, महल मिल गए, यह कोई बड़े भाग्य की निशानी नहीं है।

बडभागी तिह जन कउ जानहु

उसे जानो

जो हरि के गुन गावै॥ (अंग ९०१)

जो परमात्मा के गुण गाता है और गुण गाते गाते परमात्मा में लीन हो जाता है, वह बड़े भाग्य वाला है। महाराज कहते हैं, मेरे इस तरह के भाग्य कोई नहीं। दूसरा मैं चुगलखोर हूँ, दूसरों का बनता हुआ काम बिगाड़ता हूँ। ग़ाफ़िल कहते हैं अचेत को, अनपढ़ हूँ। भाई नंद लाल कहते हैं कि यदि वह भिखारी है, यदि वह सुल्तान है पर खुदा को याद नहीं करता तो महा मूर्ख है। हे खुदा! तुझे देख सकूँ, नज़रें भी कोई नहीं। गुरु नानक की नम्रता इंतहा को छूती है। बेबाक कहते हैं-मुँह फट। जो आया मुँह में कह दिया, जरा सा भी सोचा नहीं। महाराज कहते हैं कि मैं मुँह फट भी हूँ। जो नहीं कहना चाहिए, वह भी कह देता हूँ। जो कहना चाहिए, वह कहने का तरीका कोई नहीं। हाफ़िज कहते हैं, हे बुद्धिमान मनुष्य! एक बात सुन ले, दो बातें अक्ल और मद-बुद्धि की निशानियाँ हैं, मूर्खता की निशानियाँ हैं। कौन-सी? बोलने के समय चुप कर रहना और

चुप रहने के समय बोलना। अपना स्वरूप गुरु नानक इस पंक्ति में ऐसे पेश करते हैं–

बदबखत हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक॥

मगर एक रहमत करते हैं, इसकी मांग है, और नहीं–

नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरां पा खाक॥

(अंग ७२१)

जो तेरे मार्ग पर चलते हैं, उन रास्तों की धूल मुझे बना दे ताकि उनकी कदमबोशी नसीब हो जाए।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की कृपा नंद लाल के ऊपर हुई। नंद लाल आज तुझे कुछ देना है, मांग। ऐसा न हो कि तेरी मांग बड़ी हो, हम छोटा दें। जल्दी मांग। नंद लाल कहते हैं कि हृदय में से सभी मांगे निकल गई हैं, आज आप कहते हो मांग ले। बंदगी करते हृदय निष्काम हो जाता है। जब तक मांग है तो यह मनुष्य अपनी मांग से ही जुड़ा है, अभी प्रभु के साथ नहीं। नंद लाल का यह कहना बताता है कि यह जुड़ गए हैं पर सतिगुरु कहते हैं, नहीं तू कुछ मांग। नंद लाल कहते हैं अच्छा गुरु! मैं अपना हृदय टटोलता हूँ, देखता हूँ अपने मन को शायद कोई मांग किसी कोने में पड़ी हो। भाई साहिब मांगते हैं–शब्द

कुरबाने ख़ाक राहे संगत दिले गोइया हमी बस आरजू कर॥

आरजू एक रहती है मेरे गुरु जी मेरे भीतर, और कोई नहीं। जिन जिन गलियों से गुजर के यह संगत आपके कदमों तक पहुँची है, इनके कदमों की धूल मुझे बना दे। और कोई मांग नहीं। साहिब कहते हैं, संतों की धूल का स्नान करते ही सारे पाप उतर गए।

हरि धूड़ी नाईऐ प्रभू धिआईऐ बाहुड़ि जोनि न आईऐ॥

इस तरह के जो हरि के चरणों तक पहुँचे हुए हैं इनकी धूल का स्नान जन्म मरण से रहित कर देता है, फिर मनुष्य योनियों में नहीं पड़ता।

गुर चरणी लागे भ्रम भउ भागे मनि चिंदिआ फलु पाईऐ॥

जो कुछ मन को चाहिए, सारे फलों की प्राप्ति हो जाती है, सारे सुखों की

प्राप्ति हो जाती है। अगर मन गुरु के चरणों से जुड़ जाएँ।

हरि गुण नित गाए नामु धिआए फिरि सोगु नाही संतापै॥

वह जो गुणों का खजाना है परिपूर्ण परमात्मा उसके गुणों को गायन करें, फिर दुख और संताप नहीं लगते। परमात्मा का गुण गाते गाते मनुष्य गुणवान हो जाता है।

नानक सो प्रभु जीअ का दाता पूरा जिसु परतापै॥ २॥

जिसका वह परिपूर्ण परमात्मा रक्षक बन जाता है, वह समर्थ परिपूर्ण परमात्मा जिसका प्रताप चारों ओर फैला हुआ है, उसको समझ मिल जाती है।

हरि हरे हरि गुण निधे हरि संतन कै वसि आए राम॥

वह जो गुणों का खजाना है, संतजन जब गाते हैं क्योंकि एक गुण में महारस है।

संत चरण गुर सेवा लागे तिनी परम पद पाए राम॥

जो संतों की सेवा में लगे हैं, गुरु के चरणों से जुड़े हुए हैं, उनको परम-पद की प्राप्ति हो जाती है। परम-पद है मोक्ष, उनको मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

परम पदु पाइआ आपु मिटाइआ हरि पूरन किरपा धारी॥

जिन पर प्रभु की कृपा हो जाती है, उनको इस मोक्ष गति की प्राप्ति हो जाती है। आना जाना मिट जाता है।

सफल जनमु होआ भउ भागा हरि भेटिआ एकु मुरारी॥

ऐसे मनुष्य का संसार में आना सफल हो जाता है। उसके सभी भय खत्म हो जाते हैं। मूल भय जो मृत्यु का है, यह भय उसका मिट जाता है।

जिस का सा तिन ही मेलि लीआ जोती जोति समाइआ॥

जिसका बनाया हुआ असीम है, जिसका भेजा हुआ असीम है, गुरु ने उसी से जोड़ दिया है और सारे दुख-कलह मिटा दिए हैं।

नानक नामु निरंजन जपीऐ मिलि सतिगुरु सुखु पाइआ॥ ३॥

जिनको सतिगुरु से इस तरह की सुखमयी देन प्राप्त हुई है वह माया से रहित निरंजन जो परिपूर्ण परमात्मा है, उसका यश गायन करके निर्लिप्त हो जाते हैं, निरंजन हो जाते हैं।

गाउ मंगलो नित हरि जनहु पुंनी इछ सबाई राम॥

मंगलो कहते हैं प्रशंसा करनी। उस परिपूर्ण परमात्मा का मंगल गायन करो, जिसकी महिमा अपार है।

रंगि रते अपुने सुआमी सेती मरै न आवै जाई राम॥

उस परिपूर्ण परमात्मा के रंग में लीन हो जाओ, जो न जन्म लेता है, न मरता है। उसका यश गायन किया हुआ ही जन्म मरण से रहित करता है।

अबिनासी पाइआ नामु धिआइआ सगल मनोरथ पाए॥

नाम जपते जपते उस अविनाशी जो नाश से रहित है, उस परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है। उसकी प्राप्ति के साथ सारे मनोरथ पूरे हो जाते हैं।

सांति सहज आनंद घनेरे गुर चरणी मनु लाए॥

जिनका मन गुरु के चित्त से जुड़ जाता है, उनको सुख के स्थान की प्राप्ति हो जाती है। सुख का स्थान प्रभु का घर है। प्रभु का घर प्रभु का नाम है।

पूरि रहिआ घटि घटि अबिनासी थान थनंतरि साई॥

ऐसा जो परिपूर्ण परमात्मा है, कण-कण में व्यापक है, नाश से रहित है, उसका ही चिन्तन कर।

कहु नानक कारज सगले पूरे गुर चरणी मनु लाई॥ ४॥ २॥ ५॥

जो गुरु के चरणों में अपना मन जोड़ता है, उसके सारे काम संपूर्ण हो जाते हैं। साहिब रहमत करें। एक बार जिसका संबंध उस परमात्मा से जुड़ जाए, वह कभी यतीम नहीं होता। भूल चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा॥ वाहिगुरु जी की फतह॥